http://www.jainkosh.org

सहजानंद शास्त्रमाला

सुबोध-पत्रावली

(16)

रचयिता

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी "सहजानन्द" महाराज

प्रकाशक

श्री सहजानंद शास्त्रमाला, मेरठ

एवं

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास

गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

http://sahjanandvarnishastra.org/

सर्वाधिका सुरक्षित

श्री सहजानन्द शास्त्रमाला

सुबोध-पत्रावली

(१६)

(पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज
व पूज्य श्री १०५ क्षु० मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द'
महाराज की ओर से लिखे गये पत्रों
का संग्रह)

संग्रह कर्ता:—

मूल चन्द जैन
जैन स्ट्रीट, मुजफ्फरनगर

[प्रथ]म संस्करण प्रति २२०० } वीर० नि० सं० २४८० { मूल्य १० आना

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सुबोध--पत्रावली

भाग १

(पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज की ओर से लिखे गये पत्रों का संग्रह)

श्री युत महाशय १०५ क्षुल्लक मनोहर वर्णी इच्छाकार

पत्र आया समाचार जाने। हमारा स्वास्थ अवस्था के अनुकूल अच्छा है। पक्वपान हैं। हमको तो आपके उत्कर्ष में आनन्द है— हमारा उपदेश न कोई माने न हम देना चाहते हैं। हम स्वयं अपनी आज्ञा नहीं मानते अन्य पर क्या आज्ञा करें— आप जहां तक बने चेतन परिग्रह से तटस्थ रहना। जितना परिग्रह जो त्यागेगा सुखी होगा। विशेष क्या लिखें? आप स्वयं विज्ञ हैं। विज्ञ ही नहीं विवेकी हैं। जितने त्यागी हों सर्वको इच्छाकार।

सागर
जेठ बदि ८ सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री वर्णी मनोहर जी योग्य इच्छाकार

पत्र आया समाचार जाने। जिसमें आपका कल्याण हो वही करो— आप ज्ञानी हैं— किसी के द्वारा कुछ नहीं होता— हमारी दुर्बलता जिस दिन चली जावेगी अनायास कल्याण हो जावेगा— मेरी तो यह श्रद्धा है— जो दो द्रव्योंका परिणमन एकरूप नहीं होता। हां सजातीय द्रव्यों में (१) स्कन्ध पर्याय अनेक पुद्गल

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परमाणुओं की हो जाती है फिर भी (२) परमाणु का अन्य परमाणुओं के साथ तादात्म्य नहीं होता— तदात्वे व्यतिरेकाभावात् बद्धस्पृष्टत्वादि-व्यवहार में कोई बाधा नहीं— यदि इसको ही लोक तादात्म्य मानें तब कोई आपत्ति नहीं। यहीं जीव और पुद्गल की बद्धावस्था में तादात्म्य मान लें तब लोकों की इच्छा। किन्तु दो एक नहीं हो जाते— यदि ऐसा होता तब इसकी क्या आवश्यकता थी मिच्छतं पुण दुविहं जीव मजीवंतहेव अण्णाणं— तथा जीवस्स दु कम्मेण सह परणामाहि होंति रागादि इत्यादि कर्त्ता कर्म अधिकार की गाथा देखो—

हमारी तो यह श्रद्धा है राग दूर करने की चेष्टा करना रागादि की निवृत्ति नहीं करता— रागमें जो कार्यहो उसमें हर्ष विषाद न करना ही उसके विनाश का कारण है।

आ० ब० २ सं० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

नोटः— जितनी उपेक्षा करोगे उतनी शान्ति पावोगे। सुख शान्ति का लाभ परमेश्वर की देन नहीं उपेक्षा की देन है। परमात्मा में उपेक्षा करो— इसका यह अर्थ नहीं जो परसे सम्बन्ध छोड़दो— छोड़ना वशकी बात नहीं, वशकी बात है यदि इस पर दृढ़ रहो— वासना तो और है करना कुछ और है इसे त्यागो— अब विशेष पत्र देने का कष्ट न करना विकल्प त्यागना अच्छा— हमको निज मानना अच्छा नहीं।

× × ×

श्री युत महाशय क्षुल्लक मनोहर जी योग्य इच्छाकार

क्या लिखूं— यही भावना होती है एकत्व अन्यत्व भावना जो हैं वही आत्माको कल्याणपथप्रदा है अतः किसी एक स्थानमें रहकर उसीका ध्यान करूं क्यों कि आज तक कुछ भी नहीं किया अब कोई का आश्रय चाहना या किसी को देना दोनों ही विरुद्ध

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

विचार हैं। अवस्था अनुकूल नहीं कोई साथी नहीं–यह धारणा वाला एकत्व अन्यत्व भावना का पात्र नहीं — मेरी तो यह श्रद्धा है जो सम्यग्दृष्टि दर्शनविशुद्धि आदि भावनाओंको नहींचाहता हो जाती है— मेरी तो अन्तरंग से यह श्रद्धा है वह शुभोपयोग को नहीं चाहता हो जाना अन्य बात है, मुनिव्रत भी नहीं चाहता– वह तो कुछ नहीं चाहता क्या आप को लिखूं — क्यों कि आप जो हैं सो मैं उसका निर्वचन ही नहीं कर सकता — यह जानता हूं जो आपहीमें रमण करनेवाले हैं। कुछ मोहके नशेमें लिखमारा जो मुझे कुछ उपदेश लिखिये — आप जो प्रतिदिन उपदेश करतेहो वही अपनी ओर लाओ इससे अधिक क्या लिखूं — तत्वसे मुझसे पूछिये तो इन गृहस्थों को उचित यह है जो ये अब स्वोन्मुख होवे। जो ५० वर्षके होगये लड़का आदिसे पूर्णहैं एकदम निवृत्ति मार्गके पथिक बनें। धन्य धन्य वक्ता को दान देने में कुछ न मिलेगा — मिलना तो उस मार्ग में गमन करने से होगा— मेरा जन्म तो यों ही गया अब कुछ उस मार्गकी सुधआई सो शक्ति विकल हूं परन्तु कुछ भयकी बात नहीं— आत्मद्रव्य तो वहीं है जो युवावस्था में थी— दृष्टि परिवर्तन की आवश्यकता है—आपका जिसमें कल्याण हो सो करो— और क्या लिखें— परमार्थ से परोपकारी कोई नहीं। श्री जीवाराम जी को इच्छाकार।

आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

× × ×

श्री युत वर्णी जी क्षुल्लक मनोहर लाल जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दसे हैं बांचकर प्रसन्नताहुई। हम चैत्र सुदी १५ तक यहीं रहेंगे और फिर भी ८ दिन और रहेंगे— आप निर्विकल्प रहो और आत्मशुद्धि करो— कोई शक्ति न तो आत्मीय कल्याण में बाधक है और न साधक है। हम स्वयं साधक बाधक अपने

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परिणाम द्वारा उसे मान लेते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि निमित्त कोई नहीं— अर्थात् मोक्ष भी जब होगा तब उस समय क्षेत्रादि भी तो होंगे उन्हें कौन निवारण कर सकता है? अतः सानन्दसे धर्म साधन करो और किसी से भय न करो— परिणाम मलीन न हों यही चेष्टा करो— हम क्या लिखें— स्वयं गल्पवाद में पड़े हैं। हमको तो इसकी प्रसन्नता होतीहै जो कोई शुद्धमार्गमें रहे।

चैत्र सुदि १०
सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी साहब योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने— मेरा तो यह विश्वास है संसार में कोई किसी का नहीं यह तो सिद्धान्त है। साथ ही यह निश्चय है कोई किसीका उपकारी नहीं— इसका यह अर्थ नहीं जो मैंने आपका उपकार कियाहो— और न यह मानता हूं जो आप मेरा उपकार करेंगे— हां यह व्यवहार अवश्य होगा जो वर्णी जी की वर्णी मनोहर ने सम्यक सल्लेखना करायी— परन्तु मेरा तो यह कहना है जो आपने गुरुकुल की नींव डाली है उसे पूर्ण करिये— हमारी चिन्ता छोड़ो— हमारी सल्लेखना हमारे भवितव्य के अनुकूल हो ही जावेगी—अथवा आप लोगों के भव्य भावों से ही हमारा काम बन जावेगा— वहां पर जो ब्रह्मचारी सुन्दरलाल जी हैं उनसे इच्छाकार तथा श्री जीवाराम जी से इच्छाकार— वहांकी समाजसे यथा योग्य— वहां जो हकीम जी हैं उनसे आशीर्वाद।

इटावा
प्र० आ० ब० १३ सं० २००७

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महानुभाव क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

आप कैराना गये अच्छा किया— मेरी सम्मति तो यह है वहां

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

गर्मी के १० दिन या १५ दिन बिताकर आपको मुजफ्फरनगर ही रहना चाहिये— वहां की जनता बहुत ही धर्मपिपासु है— तथा धर्म पिपासु के साथ २ उदार भी है— गुरुकुल की रक्षा होगी तब उससे ही होगी— सहारनपुर का तो है हीं उनकी तो उसपर सदा देख रेख रहेगा ही—गुरुकुल से उदासीन रहना सर्वथा ही अनुचित है— अतः आप सर्वविकल्प छोड़ मुजफ्फरनगर आजाइये— हम तो १५० मील दूर हैं— इस वर्ष तो किसी ही प्रकार नहीं आ सकते—बीच में ही रहनेसे कुछ लाभ नहीं तथा अब हमारीशक्ति भी नहीं जो १ घंटा भीड़ में शास्त्र पढ़ सकें— लोगों का प्रेम शास्त्र पढ़ने से है होना ही चाहिये— अगर शास्त्र न सुनाया जावे तब वह क्यों इतना कष्ट उठावें— मेरी तो यही धारणा है आजकल आदर्श मनुष्य तो बिरला ही होगा— आदर्श और वक्ता यह तो अति कठिन है—मेरी धारणा है, मिथ्या भी हो सकती है— अस्तु अभी आपकी अवस्था इसके अनुरूप है। अतः एक स्थानको लक्ष्यकरके उसका उपयोग करलो— उत्तरप्रान्त का गुरुकुल आपकी अमरकीर्ति रहेगी। इसका यह अर्थ नहीं आपको इच्छा यश की हो परन्तु जनता तो यही कहेगी वर्णी मनोहर हमारे प्रान्त का उपकार कर गए—हमारा तो अब न उपकार में मन जाता है और न अनुपकार में ही जाता है। इसका यह अर्थ नहीं जो इससे परे हैं, शक्तिहीन से उपकारानुपकार कर नहीं सकते—अन्तरंग से तो कषाय अनुरूप परिणाम होते ही हैं।

प्र० आ० बं० १४ सं० २००७ आ० शु० चि०

गणेशवर्णी

× + ×

श्रीयुत वर्णी जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने— निरुद्देश्य बुलाना कोई तत्व नहीं रखता— निरुद्देश्य दिल्ली गये उसका कोई फल नहीं ऐसे ही

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

मुजफ्फरनगर बुलाकर क्या लाभ मिलेगा—यह बुद्धि में नहीं आता—केवल वाह्य धन्यवाद प्रणाली से कृतकृत्य मान लेना मैं उचित नहीं मानता— अभी आप वहां पर हैं और आपकी शान्ति से वहां का वातावरण अच्छा है— हमको इसमें प्रसन्नता है किन्तु हमारे आने से विशेष क्या होगा यह हमारे ज्ञानमें जब तक न आजावे हम वहां आवें बुद्धि में नहीं आता— अतः आप पञ्चमहाशयों से स्पष्ट कह दो यदि कोई विशेष कार्य हो तब हमको लिखिए जो हम गयावालों से इंकार करने का प्रयत्न करें— अन्यथा ऐसे उष्णकाल में यात्रा करें यह उचित नहीं।

शास्त्र सुनतेजावो चौथाकाल वर्त्त रहा है। बोलते जावो धन्य धन्य की झंकार करते जावो मैं तो इन वाह्य आडम्बरों से ऊब गया हूँ। हम तो उसदिनसे अपने को मनुष्य मानेंगे— जो पञ्चपरमेष्ठीका स्मरण भला ही न करे किन्तु उनने जो मार्ग बताया है उस पर अमलकरे यही धर्म का मर्म है।

अतः हमारेअर्थ प्रयास नकरना। हम अब इच्छापूर्वक जहां जावें जाने दो। वहां भी आ सकते हैं परन्तु आपकी प्रतिबन्धकता नहीं चाहते।

जेठ बदि ६ सं० २००६ | आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— अपवाद मार्ग भी है परन्तु उत्सर्ग निरपेक्ष नहीं— उत्सर्ग भी है परन्तु वह भी अपवाद निरपेक्ष नहीं— यह कब और किस प्रकार होता है - इसका कोई नियम नहीं साधक के परिणामों के ऊपर निर्भर है— आपने लिखा मैं अगहन में आऊंगा— मुझे आपकासहवास सदा इष्टहै। इससे विशेष क्या लिखूं— मेरा वृद्ध शरीर अब नहीं— ... मील चलना

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

कठिन है अस्तु जहां तक बनेगा निर्वाह करूंगा— मेरा श्रीयुत जीवाराम जी से सस्नेह इच्छाकार कहना, वह बहुत ही सज्जन व्यक्ति हैं।

बरुवासागर
बैसाख बदि ४ सं० २००८

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने—स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ गया था— १ पैर चलना कठिन था— अब अच्छा है आज ५० हाथ चले— ज्वर प्रतिदिन आता है— अब आशा है वह भी शान्त हो जावेगा— मैं तो आपकेप्रति निरन्तर यहीं भावना भारहाहूं जो आपकी वैयावृत्त किसीको न करनापड़े तथा ऐसी वृत्ति शीघ्र ही हो जावे जो मां के स्तन न चूसने पड़ें— आप विज्ञ हैं हमारी शल्य न करिये।

बा० जीवाराम जी से इच्छाकार तथा बा० मूलचन्दजी को इच्छाकार

माघ बदि १
सं० २००६

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— मेरा तो यह विश्वास है पर के कल्याणमार्गका कर्तृत्व भाव भी मोक्षमार्ग का साधक नहीं— मोक्षमार्ग का साक्षादुपाय रागादि दोष निवृत्ति है—रागादिक की की अनुत्पत्ति ही सम्वर है—रागादि निवृत्ति तो प्राणीमात्रके होती है किन्तु रागादि की अनुत्पत्ति सम्यग्ज्ञानी ही के होती है। अभी तो हम बरुवासागर हैं— अब तो पकपान हैं न जाने कब झड़ जावे— श्री जीवाराम जी से हमारा इच्छाकार कहना

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बरुवासागर
बैसाख बदि ६ सं० २००८

आ शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— आत्मा की निर्मल परिणति ही स्वमार्ग में सहायक होती है— अन्य सर्वव्यवहार है। अब इस प्रान्त में आवो तब शीत ऋतु बाद आना— तथा आपके पास जो त्यागीवर्ग हो उससे हमारा इच्छाकार कहना— स्वावलम्बन ही तो श्रेयोमार्ग है— आपका स्वास्थ्य अच्छा रहे इसमें आपका ही नहीं जनता का भी कल्याण है— हमारी तो अब वृद्धअवस्था एक स्थान पर ही निवास की इच्छा है क्योंकि अब विशेष भ्रमण नहीं कर सकते—

अ० सु० ४ सं० २०१६

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

नोट—हमारी तो यह भावना है आप उसी प्रान्त में एक केन्द्र बनायें जहां मुमुक्षु जीवों को स्थान मिल सके— ज्ञानचरित्र पाने का यही फल है।

× × ×

श्री महाशय १०५ क्षुल्लक सहजानन्द जी योग्य इच्छाकार—

सानन्द होंगे—आंख के ऊपर फुड़िया शान्त होगईहोगी— जीवानन्द वास्तव नित्यानन्द हैं— सन्तोषी हैं— और सर्व आनन्दों से इच्छाकार— विशेष क्या लिखें—सहजानन्द के सामने अन्य सर्व आनन्द फीके हैं।

का० सु० १५
सं० २००५

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल वर्णी योग्य इच्छाकार—

यह तो ध्रुव सत्य है जो मोहके सद्भावमें आत्मकल्याण असम्भव है— तथा मोह का अभाव कैसे हो इस चिन्तासे कुछ कार्य की सिद्धि नहीं—तत्त्वदृष्टि से यह स्वाभाविक परिणमन तो है नहीं— फिर भी तद्वत् ही अनादि से आरहा है अनादि होने पर भी पर्य्यायों को अन्त देखा जाता है। अतः इस के विषय में चिन्ता करना मैं उपयुक्त नहीं मानता— अब मेरा विचार एक स्थानपर रहने का है क्या होगा कुछ नहीं कह सकता।

पौष बदि ३ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत १०५ मनोहरलाल जी क्षुल्लक योग्य इच्छाकार—

सानन्द से धर्मसाधन करो कोई किसी का नहीं—आत्मा सर्वरूप से स्वतन्त्र है—आपने जो निर्मलता पायी है वह तुम्हारे संसारतट सान्निध्यता का कार्य है— इसका सदुपयोग कर ही रहे हो— विशेष क्या लिखें— हम तो यही चाहते हैं जो किसी की परतन्त्रता न हो — अब हमारा विचार एक स्थान पर रहने का है— अभी यहीं पर ही हैं—यहां से प्रस्थान करेंगे लिखेंगे।

अ० सु० १२ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत १०५ महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—पदार्थ का निरूपण विवक्षाधीन है— नयोंके विषयमें लिखा सो ठीक— मेरी समझ में वस्तु सामान्य विशेषात्मक है। जो सामान्य को कहता है वह द्रव्यार्थिक है— जिसका विषय केवल द्रव्य है। दूसरा विशेष को विषय करने

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

वाला है उसे व्यवहारनय कहते हैं। इसमें अनेक विकल्प हैं— अस्तु— निमित्त को न मानने वाले ही निमित्त से काम ले रहे हैं। वहां निमित्त को न मानने वालों की प्रचुरता है फिर आपको किस अर्थ ले गये कुछ समझ में नहीं आता—अस्तु फोकट चर्चा निमित्त की है— हमारा विचार अब कुछ दिन में एक स्थान पर ही रहने का है— अब के जहां चातुर्मास हुआ वहां ही रह जावेंगे यह दृढ़ निश्चय हैं, यहां से शाहपुर जावेंगे— मेरा तो यह विश्वास है जो यथार्थ निरूपण करनेवाला है वही सम्यक्त का निमित्त हो सकता है। सम्यक्त जिसके होगा उसके उसकी श्रद्धा होगी तभी तो होगा— विशेष क्या लिखें—

का० सु० १२ — आ० शु० चि०

सं० २००६ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप अब विकल्प न करें और न यह चिन्ता करें जो सहारनपुर वाले द्रव्य न देवेंगे—हमारा तो विश्वास है न कोई देने वाला है और न कोई दिलाने वाला है और न कोई लेने वाला है— व्यर्थ ही संकल्प विकल्प के जाल से यह नृत्य हो रहा है—इन्दौर जाने का विचार किया सो अति उत्तम है— आपको क्या लिखें वहां क्या करना किन्तु यह अवश्य ध्यान रखना जो निरपेक्ष रहना— इस शब्द का अर्थ व्यापक लेना—संसार के काम चलें चाहे न चलें स्वयं उसके कर्त्ता न बनना—

जेठ सुदि ६ — आ० शु० चि०

गणेशवर्णी

× × ×

महाशय श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप स्वयं महाज्ञानी हैं— किन्तु

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जहां तक बने उपेक्षा को न भूलना—रागांश भी राग ही है अतः प्रत्येक समय का भी वध करने वाला है— वैसे तो एक समय जो औदयिक राग होगा वह जितना होगा वधक और विकारी ही होगा— मेरी भावना अब गिरिराज पर ही रहने की हो गयी, यह प्रान्त छोड़ दिया है— आप को अब कुछ काल जबलपुर और सागर को भी देना चाहियें। मैं आदेश नहीं करता किन्तु प्रान्त का ध्यान जब तक राग है रखना ही चाहिये— विशेष क्या लिखूं— मैं वैसाख में जहां हूँगा आपको लिखूंगा—मेरी तो वृद्धावस्था है—पक्कपान हूँ—

कटनी — आ० शु० चि०

फा० ब० ३० सं० २००६ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया—हमारी तो श्रद्धा यह है न हमारे द्वारा किसी का उपकार हुवा और न अन्यके द्वारा हमारा हुवा— निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध का हम निषेध नहीं करते— हम क्या कोई नहीं निषेध करसकता— बोलना और बात है। आपका हमारा अन्तरंग से सम्बन्ध है परन्तु यह भी एक कल्पना है—आपका बोध निर्मल है— अतः जो आपका अन्तरङ्ग साक्षी देवे वही अंगीकार करो— न तो हमारी बात मानो और न मित्रवर्ग की मानों— यदि हमसे पूछो तब न आचार्य की मानो और न साधु की मानो—हम क्या कहें—होता यही है परन्तु मोह की कल्पना में जो चाहे कहो— हमारा अब यही अभिप्राय है जो एक स्थान में शान्ति से कालयापन करना यह भी एक मोह की कल्पना है— यदि आप हमारा अन्तरङ्ग से हित चाहते हो तब यह पत्र व्यवहार छोड़ो—दूसरी सन्मति यह है इन मित्रवर्गों को यही उपदेश दो जो त्यागमार्ग में आवें। केवल गल्पवाद से जल विलोमन सदृश कुछ

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

तत्व नहीं—मुनि महाराज का स्वरूप तो आगम में है उसी से सन्तोष करो—चरणानुयोग में क्या है ? सो पण्डित वर्ग जाने—कर्त्तव्यपथ में मुनि महाराज जाने—श्री जीवाराम जी योग्य इच्छाकार आप वृद्ध हैं। आप का लिखना मान्य हैं - हमको अब सन्तोष है जो आप क्षुल्लक जी के पास रहते हैं। आ० सु० १४ को प्रातःकाल ललितपुर पहुंचेंगे—

आसाढ़ सुदि ११ — आ० शु० चि०
सं० २००८ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—ज्ञान पानेका फल यही है जो स्वपरोपकार करना। मेरे वहां आने की अपेक्षा आप उसी प्रान्त में रहें—आपके पास सम्यग्ज्ञान है और चारित्र भी है—हम तो कुछ उपकार नहीं कर सकते क्योंकि वृद्ध हैं—आप अभी तरुण हैं—सर्व कुछ कर सकते हो—हम का० सु० ३ को पपौरा जावेंगे।

ललितपुर — आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

महाशय श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर लाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

आपको मैं ज्ञानी और विरक्त मानता हूँ—मैं अपने को कुछ नहीं मानता—मैंने जिन बालकों को पढ़ाया था वे मुझे १० वर्ष पढ़ा सकते हैं— मैं उनको महान मानता हूँ। मैं तो कुछ जानता हूं। मैं तो कुछ जानता ही नहीं और न इससे मुझे कुछ दुःख है। आपको यही सम्मति दूंगा जो तुम्हें समक्ष कहें उसको मानो पर की सुनी मत मानो—और शान्तभाव से कार्य करो—हमको गुरु मत मानो - अपनी निर्मल परिणति को ही अपना कल्याणार्य में साथी मानों—[illegible] जहां पर

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

विशेष लाभ समझो जावो न समझो मत जाओ- हम से आप का हित हुवा यह लिखना तुम्हारी कृतज्ञता है— यह भी भूषण है— किन्तु बात मर्यादित ही हितकर होती है। आत्मा ही गुरु है— वह जिस कार्य में सम्मति देवे करो—

आ० सु० १०
सं० २००६

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने—प्रसन्नता हुई—और आपका समागम मुझे इष्ट है—परन्तु आप जानते हैं मैं स्वप्न में भी गुरु नहीं बनना चाहता—परमार्थ से है भी नहीं— सर्व आत्माएं स्वतन्त्र हैं। अतः आप स्वयं स्वतन्त्र हैं—जिसमें आपको शान्ति मिले सो करें।

का० सु० १
सं० २००७

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया हमारा स्वास्थ्य अच्छा है इसकी कोई चिन्ता न करो— आप सर्व विकल्प त्यागो— कोई प्रसन्न हो या कोई अप्रसन्न हो अपनी आत्मा प्रसन्न रक्खो—आत्मीय परिणति ही कल्याण का प्रयोजक है— फिर आप तो जिनागम के मर्मज्ञ हैं इतनी आकुलता क्यों रखते हो—यदि गुरुकुल चलाने की इच्छा है तब उस प्रान्त के जो विज्ञ पुरुष हैं उनके साथ परामर्श कर जो मार्ग निकले उस पर अमल करो— अन्यथा विकल्प छोड़ो।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीयुत १०५ महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— मुझेतो आनन्द इस बातका है जो आप अपने स्वरूप में ही रत रहते हैं। श्रीमान पं० बंशीधर जी तो एकही व्यक्ति हैं जो पदार्थोंके अन्तस्तलको स्पर्श करता है। उनके विषय में क्या लिखूं ? उनके सद्भाव से प्रायः बहुत जीवों का कल्याण होगा हमारा इच्छाकार कहना— आपकी प्रतिभा ही तुम्हारे कल्याण में सहायक होगी अन्य के आश्रय की आवश्यकता नहीं— हम वर्षायोग बाद कहां जावेंगे निश्चय नहीं— जावेंगे अवश्य— हमने डोलीपर बैठना अनुचित समझकर त्याग दिया है— पैरों में विशेष शक्ति नहीं— अतः ३ मील या ४ मील चलेंगे— प्रायः इसी प्रान्तमें जावेंगे— आषाढ़ मास तक ललितपुर पहुँचे या आपके प्रान्त में पहुंचे असम्भव नहीं। परन्तु शक्ति पतनोन्मुख है।

का० ब० ३ सं० २००६ आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

अन्तरंग से निर्मल रहना चाहिये— पर के लिये उपसर्गों से आत्मा की क्षति नहीं। आत्मीय निर्मलता की त्रुटि से आत्मा की क्षति होती है। एवं पर की प्रशंसा से आत्मा की कोई उत्कर्षता नहीं है— केवल स्वशुद्धि ही कल्याण का मार्ग है— हम तो आजतक अपनी दुर्बलता ही से फंसे कोई फंसाने वाला नहीं— अतः जहां तक बने परकृत उपद्रवों को उपद्रव न मानो जो मन में संक्लेशता होती है उसका मूल कारण मिटाओ— परमार्थ से वह भी औदयिक भाव है सुतरां नाशमान है— कोई भी कुछ नहीं— निर्विकल्प रहना ही अच्छा है।

आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्रीयुत १०५ क्षुल्लक सहजानन्द जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— आप सानन्द पहुँच गये— यह सर्व जीवानन्द की महिमा है— यह प्रसन्नता की कथा है जो आप का फोड़ा अच्छा हो गया— हमारा अच्छा हो रहा है— उदय की बलवत्ता मानना व्यर्थ है— यदि श्रद्धान में विपरीतता आवे तब मैं उसे उदय की बलवत्ता मानता हूँ— यों तो शारीरिक वेदना प्रतिदिन होती ही रहती है— आपके आने से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई— मेरा धार्मिक पुरुषों से यह कहना है जो कल्याण का लाभ इष्ट है तब इन पर पदार्थों से मूर्च्छा त्यागो— कल्याण का सर्व से प्रचण्ड बाधक परमसता है। जिसने इसे त्यागा उसने अनन्त संसार को मिटा दिया— मेरा सर्व आनन्द मूर्त्तियों से इच्छाकार कहना।

अगहन बदि १ सं० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहर लाल जी योग्य इच्छाकार—

आप स्वयं योग्य है— कल्याण का पथ आचरण कर रहे हैं— व्यर्थकी चिन्ता में कुछ लाभ नहीं— हम तो आप के सदा शुभ चिंतक ही नहीं शुद्ध चिन्तक हैं— श्री जीवाराम जी से इच्छाकार।

भाद्र बदि ११ सं० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— जिसमें आपको शान्ति मिले वह करो— मेरा तो यह विश्वास है जो भी कार्य किया जाता है शान्ति अर्थ किया जाता है तथा अपने ही हित के लिए किया जाता है। कार्य चाहे शुभ हो चाहे अशुभ हो भद्र मानुष वही है जो लोकेषणा से परे है। मैं तो रेल आदि के विकल्प को अनुपादेय समझता हूँ—

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जब आवश्यकता प्रतीत हुई बैठ गए, नहीं हुई नहीं बैठे— जगत कुछ कहे इसका विकल्प ही व्यर्थ है— मैं तो चरणानुयोग इतना ही मानता हूं जिससे संक्लेश परिणाम हो मत करो -- पं० जी से हमारी इच्छाकार— अतियोग्यतम व्यक्ति है।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

जहां पर विरुद्ध कारण का सद्भाव में शान्ति रहे प्रशंसा तो तब है और जहां हां में हां मिले वहां आत्मोत्कर्ष की वृद्धि नहीं होती— अस्तु विशेष क्या लिखें—आप तत्वज्ञ हैं— जिसमें आपको शान्ति मिले सो करिये— हमारा तो जीवन यों ही गया— शान्ति का स्वाद न आया परन्तु रुदन करने से क्या लाभ—श्रद्धा अटल रहनी चाहिये—चरणानुयोग के अनुसार आत्मा को बनाना कल्याणप्रद नहीं किन्तु हमारी प्रवृत्ति ऐसी हो जो उसे देखकर अनुमान करें व्रत तो यह है— भोजनादि के त्याग से आत्महित नहीं, आत्महित तो अन्तरंग निर्मल अभिप्राय से है श्री जीवानन्द जी को इच्छाकार कहना—

आ० सु० ६ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

आपके २ पत्र मिले -- मैंने उत्तर दे दिया—आप सानन्द से धर्म साधन करते हैं मुझे आनन्द है। संसार में जिसने आत्मीय कल्याण को कर लिया यही महत्ती महत्ता है— प्रशंसा निन्दा तो कर्मकृत विकार है— जो मोक्षमार्गी है वह दोनों से परे हैं— यहां पर सरदी बहुत पड़ती है—अतः मैंने यही निश्चय किये जो दो मास

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

एक स्थान ही पर बिताऊं— आपभी मेरठ मुजफ्फरनगर आदि स्थानोंपर ही बिताइये— यहां आना अच्छा नहीं— फागुन मास में मैं आपको लिखूंगा— साथमें जो ब्रह्मचारी हों उनसे इच्छाकार— गृहस्थोंसे दर्शनविशुद्धि—

अगहन बदि ८ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्द होंगे— हमारा फोड़ा अब अच्छा है— २ मास पूर्ण सतत प्रयत्न करनेपर उत्तम हुवा— यद्यपि हमारेमें उसकी योग्यता थी परन्तु कुछ कारण कूट भी थे— जिस समय डाक्टरने उसे चीरा उससमय सबके व्यापार पृथक् पृथक् थे फिरभी एक दूसरे का निमित्त था। हम अष्टमीतक आहार रहेंगे—

पौष बदि ४ सं० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

"क्षमावणी पर गुरु शिष्य के पत्र युगल"

(अ) श्रीयुत १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

दशलक्षण पर्व सानन्दसे गया— मैंने आपका अपराध किया नहीं और न आपने मेरा किया, अतः क्षमा मांगना सर्वथा ही अनुचित है, हां यह अवश्य अपराध है जो मैं आपको और आप मुझको अपना हितू समझते हैं एतदर्थ ऐसा भावना भावो जो यह मान्यता समाप्त हो तथा इतने निःशंक रहो जो हमारा न कोई सुधार कर्ता है न और न इसके विरुद्ध करनेवाला है— मेरातो यह विश्वास है जो सम्यग्दृष्टि श्रद्धासे तो केवलीसदृश है— चारित्र-मोहकृत तरतमता का कोई लोप नहीं कर सकता—चतुर्थ गुणस्थान

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परिपाटी से होती ही है— मेरा आपके साथ जो भी ब्रह्मचारी हों उनसे इच्छाकार कहना।

भाद्र सुदि १४ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

(आ) श्रीमान् प्रातः स्मरणीय गुरुवर्य्य पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक वर्णी जी महोदय— सेवा में सविनय वंदना।

अपरंच आपका कृपा पत्र मिला—पढ़कर निर्मलता का अनुभव हुवा। महाराज जी! कल ही मैंने आपकी सेवामें पत्र भेजा किन्तु इस बालकको यह ध्यान न रहा कि तेरे निमित्त गुरुजीको अनेक वाह्य कष्ट हुये और तू क्षमा मांगने का 'क्ष' भी भूल गया और इतनी क्षमावणी हुई कभी भी ध्यान नरहा सो महाराजजी क्षमावणी के नाते अर्थात् रुढ़ि के अनुसार आप जैसे महान् से क्षमा मांगने की बातका विकल्प ही नहींहुआ और कभी कुछ ध्यान हुआ तो साहस नहीं हुआ— कि इस दिन मैं क्षमा मांगने से पहिले जबर्दस्ती यह सिद्ध करूं कि आपको आकुलता कलुषता हुई। मेरे हृदयमें यह बात है कि आप प्रकृत्या क्षमाशील हैं, मुझे अपने आपको क्षमा करने की कमी है और जो आपने लिखा है वह मेरे कल्याणार्थ तत्वस्वरूप का दिग्दर्शन करानेकेलिये लिखा है इससे मेरे भावमें भलाई हुई— कभी कभी मेरे किसी के प्रति, व्यर्थ सताये जाने पर "यह मेरा अकारण विरोधक क्यों होता" यह विचार हो जाया करता था परन्तु आपके उपदेशसे अब मेरे इस विचार से दूर रहने का प्रयत्न है तथा भावना करता हूं कि भविष्य में आपकी कृपा से ऐसा सहनशील रहूं कि कोई कुछकरे करो अपनी चेष्टा से— सुखी होहुं, "मेरा तो जो भवितव्य है सो अपने चतुष्टय से हो रहा" इस निर्णीति के अनुसार अपने स्वात्मानुभव

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

के योग्य रहने रूप मार्ग में व्यर्थ विकल्प के कंटक न बिछाऊं। श्री ब्र० जीवानन्द जी आदि सबका आपको वंदना पहुंचे। आपके आदेशोपदेशाशीर्वादात्मक पत्र का लाभ मुझे निज मार्ग पर चलने में विशेष सहायक निमित्त होता है।

आश्विन बदी ३ सं० २००६

आपका
विनम्र सेवक अकिञ्चित्कर
बालक मनोहर

× × ×

"पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर जी वर्णी की जयन्तिके अवसरपर उनके प्रातःस्मरणीय गुरु जी के पत्र"

(अ) मुजफ्फर नगर समाज को—

सर्वसमाज योग्य कल्याणभागी हो— जिस संसार भीरु आसन्न भव्यकी जयन्ती मना रहे हो वह कल्याण मार्गका प्रकाशक हो यही हमारी भावना है— यही कहना है ऐसे सुअवसर पर यदि कुछ चिरस्थायी आत्मीय उपकार करनेकी अभिलाषा है तब परकीय पदार्थों से ममता त्यागो साथ ही ऐसा स्थायी कार्य करो जो आप लोगों की स्थायी कीर्ति रहे— जिन पर पदार्थों में चिरकाल से उलझ रहेहों उन्हें त्यागो— हमारी तो यह भावना है जो मन्दिर जाकर भगवान से यह प्रार्थना करो हे भगवान् हमें ऐसी सुमति दो जो फिर मन्दिर न आना पड़े— दान देकर भी यही भावना भावो फिर दान न देना पड़े— विशेष क्या लिखूं— एक गुरुकुलसंस्था आपकी चिरजीवी हो जिसमें आगम का प्रसार है— यदि वहां पर पं० हुकमचन्द आदि हों तब हमारी क्या कहें कहना—

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

इटावा
२—११—५०

× × ×

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

(आ) मेरठ समाज कोः— (ब्र० जीवाराम जी द्वारा)

श्रीयुत ब्र० जीवाराम जी योग्य इच्छाकार—

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहर जी मनोहर ही हैं— मैं यह भावना भाता हूँ जो यह व्यक्ति सानन्दसे जीवन बिताकर स्वपरोपकार करे। यह बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति है। इसकी धारण शक्ति बहुत ही उत्तम है। यह एक बार ही में धारणा कर लेता है। जब यह अष्टसहस्री प्रमेयकमलमार्तण्ड जीवकाण्ड कर्मकाण्ड को पढ़ता था एक घण्टा में याद करलेता था। वर्त्तमानमें भी अपने पदकी रक्षा करके समययापन करता है— आपने इनकी जयन्ती कर उत्तम कार्य किया। सच्ची भक्ति तो यह है जो इनके नामकी छात्रवृत्ति देकर २ छात्र हस्तनापुर गुरुकुल में पढ़ाओ या किसी बड़े विद्यालय में पढ़ाओ— यह हमको मानता है इससे हम इनकी क्या प्रशंसा करें— हमसे पूछो तो यह निकट भव्य है। इसका नाम तो परमेष्ठी मन्त्र में लिया जावेगा। विशेष क्या लिखें—

आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

× × ×

(इ) इन्दौर समाज कोः—

श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी की जयन्ती मङ्गलजननी हो— प्रथम तो यह विशिष्ट ज्ञानी है— ज्ञान के साथ चारित्रवान् भी हैं— साथ ही वक्ता भी उत्तम है—ऐसे मानवकी जयन्ती किसको मंगलकारक न होगी—यह मनुष्य दीर्घजीवी रहे यह मेरी भावना है— अंतरंग से यह कामना मेरी है जो हे प्रभो ! तेरे ज्ञान में ऐसा जीव दिगम्बर मुद्रा का धारी हो जिससे धर्म की प्रभावना विशेष हो।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

चारित्रकी महिमा ज्ञानसे है— अभी इस समय इसका समागम प्रायः नहीं देखा जाता था—इस त्रुटि को आपने पूर्ण की, इसकी मुझे क्या जनतामात्र को प्रसन्नता है। आप ज्ञानचारित्र के साथ वक्तृत्व गुण से भी पुष्ट हैं—यह सोने में सुगन्ध गुण के सदृश है—इतना ही नहीं आप सरलस्वभावके हैं आप शतवर्ष जीवी हों यह मेरा आशीर्वाद है।

सरल स्वभाव के साथ आप कृतज्ञ भी हैं।

मेरी आभ्यन्तर भावना है जो आपका जीवन ज्ञान और चारित्र के समागम में ही पूर्ण हो आपका जैसा निर्मल ज्ञान है वैसा ही निर्मल चारित्र हो— इस क्षुल्लकवृत्ति का अन्त हो और साक्षान्मोक्ष मार्ग का साधक दिगम्बरपदका लाभहो। आपमें सर्वसे महान् गुण कृतज्ञता है जो कि मानवताकी जननी है। मेरी तो यह सम्मति है जो वही मनुष्य संसार के बन्धनोंको काट सकता है जो अपनी ओर देखता है। प्रायः मनुष्य पर के विषय की चिन्ता करते देखे जाते हैं। यह मोह का जाल है— परमार्थ से कुछ नहीं।

येन दृष्टं परंब्रह्म सोहं ब्रह्मेति चिन्तयेत्।
किं चिन्तयति निश्चिन्तो द्वितीयं यो न पश्यति॥

मेरी तो यह श्रद्धा है पुण्य से या उसके फल से शान्ति लाभ नहीं।

अलमर्थेन कामेन कुकृतेनापि कर्मणा।
एभ्यः संसारकान्तारे न प्रशान्तमभूत्मनः॥

कारण है जो सेठ को भी एकान्तवास करना ही पड़ा— संसार में सर्वसे महान् पुरुष तीर्थंकरों को ही यह सर्व त्यागना ही पड़ा। शेषमें जैसे थे वैसे हो गये।

का० ब० ४ सं० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीयुत सकल पञ्चान महाशय मुजफ्फरनगर योग्यदर्शन विशुद्धिः—

आप लोग सानन्दसे होंगे – वर्णी जी सानन्दसे पहुँचे होंगे। मेरी तो यह भावना है जो आप महानुभावोंको उनके द्वारा धर्म-लाभ हो— मैं तो इतना वृद्ध और दुर्बल हो गया हूं जो अब आप महानुभावोंको कुछ भी लाभ नहीं पहुंचा सकता फिर भी भावना आप लोगोंके कल्याण की सतत रहती है— मेरा वर्णी जी से कहना है जो आप उसी प्रान्त में रहें और अधिक समय मुजफ्फरनगर मेरठ आदि में देवें। वस्तुतस्तु कल्याण का मार्ग प्रत्येक में है। हम लोग अनादि बन्धनसे पराधीन होरहे हैं और आत्मीय शक्ति को हीन मान रहे हैं— यह हीनता ही हमको दुःख की खानि है, अतः पराधीनता छोड़ शूर बनिए – फिर न तो मेरी आवश्यकता होगी और न वर्णी की— अजी हमारी कथा छोड़िए भगवान की भी आवश्यकता छूट जावेगी—स्वयं भगवान् हो जावोगे—

१५ दिन बाद सोनागिरि पहुंचेंगे—

वाह

फा० ब० ७ सं० २००७

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री ब्रह्मचारी जी (ब्र० जीवाराम जी) इच्छाकार—

संसार की गति विचित्र है—यह सर्व कहते हैं। अपनेको इससे पृथक् समझते हैं यही आश्चर्य है। जिस दिन अपनी दुर्बलता का बोध हो जावेगा यह कल्पना विलय हो जावेगी।

मुरार

२२—१—५१

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री ब्रह्मचारी जी (ब्र० जीवाराम जी) इच्छाकार—

सानन्दसे काल जाने यही करना। आपत्तियां तो पर्याय में

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

आवेंगी जावेंगी सहन करना। अशान्ति न आवे यही कर सकते हैं।

इटावा
८—१—५१

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय ला० जिनेश्वर दास जी योग्य इच्छाकार—

आपका पत्र आया था—मेरा तो यह विश्वास है संसार कोई वाह्यवस्तु नहीं और न मोक्ष कोई वाह्यपदार्थ है। आत्मा ही संसार और मोक्ष है—आत्मा ही निर्मल और समल परिणामों से जब युक्त होता है तब ही यह व्यवस्था हो जाती है—आप जहां तक बने स्वात्मपरिणतिके निर्मल करनेकी निरन्तरचेष्टा करिए और यहां वहां जाने में कोई तत्व नहीं आप जानतेहैं किसी की परिणति किसी से नहीं मिलती और न मिलेगी और न मिली थी। अतः पराराधना की चिन्ता छोड़िये—स्वात्माराधना की ओर दृष्टि दीजिए, केवल वर्णी या अन्य की संगति से विशेष लाभ की सम्भावना नहीं।

श्रावण वदि ११
सं० २००५

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत जिनेश्वर प्रसाद जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप स्वयं विज्ञ हैं। संसार अनित्य है यह आपको सम्यक विदित है क्योंकि पर्याय है। इसके निर्माता हम ही हैं। "मत्तो विनिर्गतं विश्वं मय्येव लयमेष्यति मृदि कुम्भोजले वीचिः कटंक कनके यथा" आत्मा की विकार परिणति का नाम ही संसार है इसका आपको अनुभव ही है। कल्याणका मार्ग कहीं नहीं हमही में है अतः सर्व विकल्पोंको त्याग वही करो। गृहिणी की औषधकरो परन्तु गृहिणीको गृहिणीही मानो—मोह के जाल में न फंसो—भगवान् का गुणगान करो परन्तु उसे

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

निज न मानो। सर्व पर द्रव्य में राग छोड़ो— विशेष समय मिलने पर लिखूंगा।

आ० ब० ११ सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री महानुभाव लाला जिनेश्वरदास जी योग्य दर्शन विशुद्धिः—

पत्र आया समाचार जाने—आप जानतेहैं मैं जैसा हूं—मुझे इस बात की प्रसन्नता है जो आप उस पथ पर हैं जो संसार के बन्धन काट देता है— यह जो संसार के सम्बन्ध हैं पर्याय के अनुकूल होते ही हैं इनमें निजत्व कल्पना ही संसार की जननी है। जहां वह गई सर्व गया—अतः गृहिणी का सम्बन्ध पर्याय के अनुकूल हुवा इसे कौन मेट सकता है। यदि चाहे तो गृहस्थ भी मेट सकता है और यदि निर्मलता न आई तब छोड़कर भी नहीं मेट सकता—अतः अन्तरंग से पर पदार्थ में निजत्वं मेटना ही पुरुषार्थ है। मेरा तो यह विश्वास है सम्यग्दृष्टि परमेष्ठी में भी निजत्व कल्पना मेट देता है। उन्हें भी ज्ञेय मानता है। राग होना और बात है, राग में राग होना अन्य बात है

जेठ बदि १० सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय लाला जिनेश्वर दास जी योग्य दर्शन विशुद्धिः—

आपका पत्र श्रीपवनकुमारद्वारा मिला— आपके ऊपर जो आपत्तियां आई हैं वह नवीन नहीं। संसारमें यही होता है। इनके होने पर सावधान रहना ज्ञानी का कार्य है—वास्तव में जिस दिन हम इन आपत्तियों को ऋण जानकर अदा करेंगे उसी दिन इस भवोदधि से पार होने में विलम्ब नहीं। मैं तो हृदय से कहता हूं जो किसी के समक्ष अपनी कायरता प्रगट न करना। आत्मा

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

स्वयं अनन्तशक्तिका धारक है और जिससे लड़नाहै वहभी अनन्तशक्तिवाला है। परन्तु यह उसके वारका ज्ञाता है। वह बेचारा ज्ञाता नहीं। प्रत्युत इस चेतनने ही उसे अपना शत्रु मान रखा है और इसीने उसके विकार परिणमनको अपनाया है अतः अपनी विकार परिणतिको ही रोको, यही संसारसे पार करेगी, व्यर्थ किसीके समक्ष अपनी भूल प्रकट न करो। हमारी सम्मति मानो तब प्रत्येक समय प्रसन्न रहो। हम तुमको कौनसा दुःख है। सप्तम नरकका नारकी जिस अवस्थामें है उसको श्रवणकर हम कंप जाते हैं और वह जीव उस घोरसंकट में अनन्त संसार के नाश करने वाले परिणामों को उत्पन्न करलेता है। तुम्हें कौनसी आपत्ति है— स्त्री बीमार है— औषध करो— व्यग्र मत हो और कुछ दिनका ब्रह्मचर्यव्रत लेलो। मेरी सम्मति तो १ वर्ष की है, तुम अपनी परिणति विचार कर व्रत लेना और उसे भी उपदेश दो जो वह भी मोक्षमार्ग में लग जावे। किसीकी सहायताकरो अच्छा है परन्तु उसे यह अवश्य शिक्षा देना। विवेक से काम करना। मेरा आपसे यही धर्म स्नेह है जो था— हमको जो मिलता है वह गुरु ही मिलता है। मैं इसमें हर्ष ही मानता हूँ।

वैसाख सुदि २ सं० २००८ — आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् लाला नेमिचन्द जी वकील—योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आपका आया बहुत ही सन्तोषजनक है— धर्मपुरी बनाने के लिये मेरी समझ में किसी व्यक्ति विशेष की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता कुछ तत्वज्ञानी निरपेक्ष सदाचारी जीवोंकी है। आकाश (स्वर्ग) से नहीं आवे। आप ही लोग उसके योग्य हैं— यद्यपि अभी आपको कुछ शल्य है और मैं उसको योग्य भी मानता हूं वह आपकी निर्मलता शीघ्रही निकालदेवेगी। मैं भी अब वृद्ध

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

हूं ऐसी धर्मपुरी का आश्रय चाहता हूं— मुझे आह्वानन की आवश्यकता नहीं—मैं तो कोई योग्य नहीं किन्तु हृदयसे कहता हूँ उत्तमसे उत्तममनुष्य वहाँ आवेंगे और कायकषाय सल्लेखना कर जन्म साफल्य का लाभ लेवेंगे— परन्तु आवश्यकता है आपकी परन्तु आवश्यकता है आपकी सम्मति पर जो आपको कहते हैं आरूढ़ हो जावें— शाब्दिक जाल न रचें— मैं हृदय से चाहता हूँ—उस नगरी में वही रहें जो निशल्य हो—सर्व से बड़ी शल्यचेतन परिग्रह से रहित हों—आगामी चातुर्मास में इसकी स्थापना हो जावे—स्थान स्वतन्त्र हो—विशेष क्या लिखूं—लिखना तो बहुत है परन्तु उससे तत्व की पूर्ति नहीं— कार्यसम्पादन करने से ही लाभ है।

जे० सुदि ८ सं० २००७

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् महाशय लाला नेमिचन्द जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने— आप स्वयं विज्ञ और विवेकी हैं। कल्याणमार्ग में यही मुख्यकारण है— जिसके विवेक और विज्ञान है उसे अब किसीसे मार्ग पूछनेकी आवश्यकता नहीं—मेरा तो यह विश्वास है सुमार्गका निश्चय स्वयं होता है। अन्य तो निमित्त मात्र है। सो निमित्त भी आपके अच्छे हैं। हम तो इस स्वयं विषय में पर की सहायता चाहते हैं। आपको क्या सहायता दे सकते हैं। हां हमारा यह अटल विश्वास है जो पर की सहायताको नहीं चाहते वे ही मोक्षमार्गके पात्र हैं।

पौष बदि २ सं० २००५

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आपका आया समाचार जाने—आप विज्ञ होकर व्यर्थ खेद करते हैं। चारित्रकी उत्पत्ति काल पाकर होगी। सम्यग्दर्शन तो श्रद्धारूप है। आपको श्रद्धामें तो सन्देह नहीं फिर इतनी आकुलता क्यों – श्रद्धा तो अन्तरङ्ग वस्तु है आप जानते हैं।

यदि आप हमारी सम्मति मानो तब घर मत छोड़ना तथा आजीविका की पूर्ण थिरता जब हो जावे तभी वकालत छोड़ना— न्याय से आजीविका उपार्जन करना क्या दोषाधायक है— स्त्री पुत्र बांधव बन्धके कारण नहीं, आसक्तता बन्धका जनक है। स्वाध्यायमात्र कल्याणका कारण नहीं। चरणानुयोग के अनुकूल यथाशक्ति आचरण होनाचाहिये—व्रत का होना कषायके क्षयोपशम से होता है। श्रद्धा के लिये व्रत की आवश्यकता नहीं— कल्याणतरु का अंकुर श्रद्धा से ही होता है। काल पाकर वही तरु हो जाता है—व्रती होनेपर आजकल जो कठिनताएं हैं ज्ञानी व्रती जान सकता है। बाईजी का कहना था यदि अन्तरंग मूर्च्छा नहीं गई तब व्रती बनना दम्भ को आश्रय देना है— आप विशेष विकल्पों को छोड़ स्वाध्याय करना वही सर्वमार्ग बतावेगा। आतुर होने की आवश्यकता नहीं।

भाद्रसुदि १५ सं० २००२

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् बाबू नेमिचन्द जी साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। यहां पर १ मास अच्छे अच्छे विद्वानों का समागम रहा जिनके द्वारा पंडितों को तो लाभ हुवा ही था जनता ने भी लाभ उठाया। अन्तिम दिवसों का लाभ मुझे भी मिल गया। वर्णी मनोहर तो वास्तवमें मनोहर ही है। फिर चम्पा को इनका सम्बन्ध मिल गया है। फिर विश्वास रखिए जिस

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बाग में मनोहर चम्पा की सौरभ फैल रही है उसमें काला भ्रमर भला ही नहीं जावे परन्तु अन्य तो सभी उस सौरभ की लालसा रखेंगे ही। अतः इस चिन्ता को छोड़िये गुरुकुल कैसे स्थिर होगा। अनायास होगा हमारी तो यही भावना है। मैं हृदयसे आपके भावोंकी सफलता चाहता हूँ और श्रीमान् रतनचंन्द जी की संरक्षकता में अल्प ही कालमें यह मनोहर चम्पा बाग बहुत विस्तृत होगा। मनुष्य की सद्भावना वह वस्तु है जो अपना तो कल्याण करती है उसके निमित्त से जगत का कल्याण हो जाता है। जहां जिनेश्वर दास हैं वहां किस बात की न्यूनता। हरिश्चन्दसा दानी हो फिर उस कार्य की न्यूनता स्वप्न में भी नहीं हो सकती— गृहस्थ की झंझट क्या मोक्ष मार्ग का बाधक हो सकती है। नहीं। मेरी बुद्धिमें नहीं। अतः असंख्य दुःखों का घर सप्तमनरक वहां का निवासी तो अनन्त दुःखोंके कारणको मिटा दे—स्वयंभूरमण के तिर्यञ्च पंचम गुणस्थान प्राप्त कर लेवें और हमलोग धवलाका स्वाध्याय कर कल्याणके पास न हों बुद्धिमें नहीं आता—भाई रतनचन्द जी साहब से कह देना अभी सागर मत जावो— जो सागर समुद्र में गोता मारकर रत्न निकालनेवाले थे वह तो अब चले गये—शायद भादोंरि एकमें : फ या दो आजावें। अतः अभी न आना। भाद्रमास में आना उत्तम होगा। अब तो यहां ऊपर से उसकी लहर लेने वाले ही रह गये हैं।

सागर

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय पण्डित हुकमचन्द्र जी जैन ब्रह्मचारी योग्य इच्छाकार

मैं कार्तिक सुदि २ को श्री गिरिराज की ओर प्रस्थान करूंगा— वहां पर महान् समारोह होनेवाला है— व्याख्यान तत्व विवेचन आदि तो होवेंगे ही— किन्तु यह होना प्रायः कठिन है जो ४ या ६

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

व्यक्ति जोकि सर्व तरहसे सम्पन्न हैं मोक्षमार्गपर आरूढ़ हों— मोक्षमार्गसे तात्पर्य निवृत्तिमार्गसे है— (संयम) बिना सम्यग्दर्शन ज्ञान कर्मबन्धन नहीं काटसकते— आपेक्षिक विवेचनाकर मूल अभिप्रायका घात नहीं होनाचाहिये— अतः जहांतक पुरुषार्थ हो इसमें लगाना जिससे मेला और यात्राकी सार्थकता हो— आज जो धार्मिकसंस्था यथार्थ नहीं चलती उसका मूलकारण हमारे गृहस्थ भाई त्यागी होकर संस्था नहीं चलाते— अतः परिश्रमकर अबकीबार वह प्रयत्नकरना जो ४ या ६ गृहस्थ आप लोगोंकी गणनामें आजावें— केवल शब्दोंकी बहुलतासे प्रसन्न होजाना पानी विलोवन सदृश है— तथा वहांपर जो संस्था है उसमें २०० छात्र अध्ययन करें ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये तथा आपकी मंडली हो। कमसे कम २० महानुभाव उसमें होना चाहिये—इस प्रकारके व्याख्यान होना चाहिये जो प्राणी मात्रको उसमें रुचि हो। धर्मवस्तु व्यक्तिगत है विकासकी आवश्यकता है। जब असंख्यात लोक प्रमाण कषाय हैं तब उनका अभाव भी उतनेही प्रकारका होगा— पूर्ण कषायके अभावका नाम ही तो यथाख्यात चारित्र है। एक भी भेद जहां रहे वहां वह यथाख्यात नहीं होसकता— भगवान् समन्तभद्रने तो लिखा है गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो— आदि अतः ऐसा विवेचन करो जो सर्व मनुष्य लाभ उठा सकें— आज भगवान्के निर्वाणका दिवस है, साथी लोग पावापुर गये हैं, कुछ मन में आया जो आप लोगोंको कुछ लिखूं— अन्तरंग से मैं आपलोगोंके समागमको चाहता था परन्तु कारण कूटके अभावमें नहीं होसका - परन्तु आपको सम्मति देता हूँ जो भूलकर भी हस्तनागपुर क्षेत्रको त्याग कर अन्यत्र न जाना— कहीं कुछ नहीं और सर्वत्र सब कुछ है तब भ्रमण करने से क्या लाभ— वहीं जो लाभकी वस्तु है अपने में ही है — जब यह सिद्धान्त है तब व्यर्थभ्रमणकरनेसे क्या लाभ प्रत्युत हानि है। मोहीजीव जो न करे सो थोड़ा— मोहीजीव ही

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

तो यह कहता है यत्परैः प्रतिपाद्योहं यत् परान् पतिपादये उन्मत्तचेष्टितं तन्मे यदहं निर्विकल्पकः— अनवस्थित चित्तवाले तो कुछ भी नहीं उनका समागम भूलकर न करना— और आपकी जो मण्डली है प्रत्येक व्यक्ति को इच्छाकार कहना— और यह कहना— सर्वसे ममता त्यागो, सर्वसे तात्पर्य अपनेसे भी है— जो अपनेसे ममता त्याग देगा वह फिर अन्य से ममता करेगा सम्भव नहीं— यदि उचित समझो तब गुरुकुल की अपील होतो यह संदेश हमारा सुना देना जो आप लोगों के व्यय हो उसमें १) में १ पैसा गुरुकुल को देवें जैसे आपका वार्षिक व्यय ४०००) है तब ६२॥) गुरुकुल को दें खर्च भोजन वस्त्र विवाह— छात्र सम्मेलन में यह कहना जो छात्र १००) मासिक व्यय करे वह १॥-) गुरुकुल को देवें— यदि क्षुल्लक मनोहर जी आए हों तब हमारी इच्छाकार कहना और कहना गुरुकुल संस्था को पुष्ट करो इसमें विशेष लाभ है। निवृत्तिमार्ग में यह सर्वथा अनुचित नहीं।

जिनभवन, गया
का० ब० ३० सं० २०१०

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय नेमिचन्द्र जी साहब योग्य इच्छाकार—

आपका पत्र आया— समाचार जाने। आप जो कार्य कररहे हैं प्रशंसनीय है— व्यर्थके विकल्पमें मत पड़िये— मैं आपसे पूंछता हूं जो घर छोड़कर अनागार तो होगे नहीं— अथवा अनागार होकर भी क्या सप्तमगुण से ऊपर तो न जावोगे— अतः मेरी तो सम्मति है एकान्त में रहो परन्तु घर छोड़नेका नाम मत करो— औदयिक रागादि तथा यह होवेंगे ही, उनको रागादि ही मानना उनमें अनुरक्त न होना, मैं तो यही रागादि छोड़नेका उपाय मानता हूं— आपतो उस अनुयोगका अभ्यास कररहे हो जहां अन्तरंग परिणामोंके उपादानादि कारण हस्तामलक होते हैं— आशा है

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

आप किसीके चक्रमें न आवें — जो आपकी आत्मा साक्षी दे उसी पर अमल करें।

का० व० १४ सं० २००८ — आ० शु० चिं०

क्षेत्रपाल, ललितपुर — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् वकील साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। मेरा इरादा पहले तो आपके प्रान्त में ही आने का था परन्तु फिर यही विचार आया जो ईसरी ही जावें क्योंकि अब अवस्था वृद्ध है। आप लोगोंको कुछ लाभ तो होगा ही नहीं तथा न मैं तत्वों का मार्मिक विवेचक हूं परन्तु उस ओर अनेक आपत्तियां जानकर रुक गया—आपकी तरफ भी अनेक उपद्रव हैं अतः माघ के अन्त तक जबलपुर ही रहना अच्छा समझा क्योंकि जबतक इनका गुरुकुल भी बन जावेगा तथा उसका उद्घाटन भी हो जावेगा—आपकी तरफ तो शिक्षितवर्ग है तथा विशाल हृदय वाले हैं— श्री मनोहरलाल, चम्पालाल जी साहब पूर्णयत्न से गुरुकुल की उन्नति में लगे हैं। मेरी भी यह सम्मति है जो उन दोनों महानुभावोंको यही उचित है जो जिस कार्य को उठाया उसे पूर्ण करना चाहिये यही श्री गोमट्ट स्वामी जी की यात्रा है— श्री मालवीय जी एक ही थे परन्तु अपने पुरुषार्थ से से हिन्दू जाति का उत्थान कर दिया— श्री जवाहरलाल एक ही तो हैं भारतमात्र के उद्धार करने का बीड़ा उठाया है। कृपलानी, राजेन्द्र तो एक ही है—देखो जिन्ना एक ही तो हैं तमाम मुसलमानों के उद्धार का बीड़ा उठाया है। होना न होना भवितव्य आधीन है—हमारे यहां कार्य भी करते हैं और भरत भी बनते हैं—ऐसे उदासीन भाव कार्य साधक नहीं— सम्यग्दृष्टि उदासीन रहता है सो क्या संसार का नाश तो उदासीनता से नहीं कर लेता—जब तक चारित्र अंगीकार नहीं करता तब तक अविरत ही रहेगा— भरत महाराज

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बड़े उदासीन थे परन्तु केवलज्ञान भी हुआ जब जब चारित्र अंगीकार किया— अतः कार्य की द्योतक उदासीनता अवश्य छोड़ना चाहिये तथा गुरुकुलकेअर्थ यदि चन्दा मांगा जावे इसमें लज्जाकी कौनसी बात है परन्तु हमलोग उसमें अपनी हतक समझते हैं। हमें विश्वास है यदि श्री मनोहर, श्री चम्पालाल जी इस कार्य में सर्वशक्ति लगा देवें तब गुरुकुल एक ही संस्था उत्तर भारत में हो जावे।

१० नवम्बर सन् १९४६

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

× × ×

श्रीयुत वकील साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

आपके पत्र से यह विश्वास हमें हो गया है जो आप निकट भव्य हैं— आपकी जो चिन्ता है वह ठीक है—आपकी जो इच्छा हो सो करना परन्तु एक बात मेरी मानना—जो इस काल में घर न छोड़ना— आजीविका का साधन जो है सो ठीक ही है—व्यापारमें इससे भी अधिक झंझट में पड़ोगे— अच्छे से अच्छे व्यापारी ब्लेक मार्केट द्वारा धनी बनने की चेष्टा करते हैं—ईमानदारी सर्वस्थानोंमें हो सकती है वकालत का पेशा मिथ्यावचनों से ही चलता है यह नहीं— कल्याणका मार्ग बाह्य त्यागकी अपेक्षा अन्तरंगसे अधिक सन्निहित है— आप जानते हैं पंचम गुणस्थानतक रौद्रध्यान रहता है— इसका यह अर्थ नहीं जो आप इसको उपयोग में लावें आपतो निरन्त संसारसे उदास रहते हैं— यही इस पदमें हो सकता हैं— विशेष क्या लिखें हमारीतो यह श्रद्धा है जो न तो कोई किसी का उपकार करता है और न उपकार करता है केवल मोह की कल्पना है।

मढ़ियाजी
आ० व० ३ सं० २००३

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्रीमान् बाबू मुख्तार साहब व बा० नेमिचन्द जी वकील साहब जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

आपका पत्र मिला— मेरा स्वास्थ्य अब पकेपानके सदृश है– आप जानते हैं श्रद्धा होनेके बाद यहीदशा ज्ञानी जीवकी होती है जो आप महाशयोंकी होरही है— सम्यग्दृष्टिके निन्दा गर्हा यही तो होता– चतुर्थगुणस्थानवाले या पंचमगुणास्थानवालेको वीतरागीमुनिकी शान्तिका आस्वाद कैसे मिलसकता है परन्तु श्रद्धा तो निर्मल है—और मेरा यह विश्वास है उसे सांसारिक कार्य करने पड़ते हैं करना नहीं चाहता है यह तो ठीक ही है। वह शुभोपयोग तक नहीं करना चाहता है। आप लोगोंके पत्रसे मुझे दृढ़विश्वास है आपका संसार अल्प है। यह प्रशंसाकी बात नहीं क्योंकि मैं जो लिखता हूँ भीतरसे लिखता हूं। मैंने १ मास में २ दिन बोलनेका रक्खा है। इसका कारण यह है जैसे आप अशान्त हैं मैंभी हूं इससे यह निश्चय किया जब मुझे शान्ति मिले तब अन्यको उसका उपदेश दूं— जबतक आत्मीयकषाय न जावे अन्यको उपदेश देना वेश्या ब्रह्मचर्य के उपदेश तुल्य उसका प्रयत्न है अतः आपका यहां आना लाभप्रद न होगा—

द्विदलके विषयमें आशाधार का मत संगत मालूम पड़ता है– खाना व न खाना दूसरी बात है— मनुष्यों की चेष्टा आजकल कौतूहलरूप है— आपतो आगम के अभ्यासी हैं— आजकल बाजारकी जलेबी खाजावें एकेन्द्रिय व वनस्पति का परहेज करें। मेरी सम्मति है सर्वकुछ करिये किन्तु सहसा घर न छोड़ना—जिसदिन आपकी इच्छाके अनुकूल सामग्री होजावे और परिणामों में उदासीनता विषयों से होजावे विरक्त हो जाना– विशेषपत्र अवकाश पाकर दूंगा –

आ० शु० चिं०

प्र० चैत्र सुदि ३ गणेशवर्णी

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी साहब वकील योग्य दर्शनविशुद्धि—

भाई साहब को दर्शनविशुद्धि— हमने ४ मासका मौनलिया है और इसकाल में लेखनी द्वारा भी निजाभाव व्यक्त न करेंगे— तथा १ मास में १ बार पत्र देवेंगे—संसारमें शान्तिके अर्थ अनेक उपायकिए परन्तु वंचितरहे— इसका मूल कारण आत्मीय अज्ञानता है—कल्याणका पथ सरल है परन्तु हमने उसे अपनी अज्ञानतासे अति दुष्कर मान रक्खा है—पर पदार्थमें मूर्छा का त्याग ही इसका सरल मार्ग है—यह कह देना सरल है कार्य में परिणतकरना कठिन है—अस्तु विशेष क्या लिखूं—मिनटों का कार्य अनन्त जन्मों में न बना यह भी एक वाक् चतुरता है—

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी वकील योग्य दर्शनविशुद्धिः—

पत्र आया समाचार अवगत हुए—अतिचार या अंग तो प्रतिज्ञापूर्वक जहां परव्रत ग्रहण किया जाता है वहां होता है— जिसके चरणानुयोगके अनुसार व्रत नहीं लिया उसकी प्रवृत्ति में यदि दोष लगता है तब वह अतिचार कैसे—अव्रती के सम्यग्दर्शन में दोष नहीं होना चाहिये प्रत्येक कार्यके लिये उपादान और निमित्तकी आवश्यकता है— इसका कौन— कर सकता है। कल्याण मार्गकेलिए जो आपने लिखा स्वयं आत्मा ही है परन्तु निमित्तकी सबल आवश्यकता है। यहां सबल पदकी क्या आवश्यकता थी—यह सबल पद निमित्त की प्रधानता दिखाता है सो न्याय संगत नहीं—क्षपणकाप्रारम्भ केवली, श्रुत केवली के सन्निधानमें होता है—इसमें क्या निमित्तकी सबलता है नहीं— हमको तो यह विश्वासहै मोहके सद्भावमें निर्ग्रन्थोंके भी आकुलता होतीहै—देशव्रती और महाव्रतीकी तो कथाही क्याहै—अन्यथा

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

छठवेंगुणस्थानमें निदानवर्ग आर्त्तमय ध्यान न होते पंचम गुणस्थानमें रौद्रध्यानका सद्भाव न होता है—इतना होनेपरभी मोक्ष मार्गका बाधकनहीं-श्रद्धाकी निर्मलताही कल्याणकी जननीहै— उदयानुसार कार्य होतेहैं उनमें उदासीनता रखना ज्ञानीका कर्त्तव्य है—सम्यग्दृष्टि प्रत्युत्पन्न भोगोंमें आसक्त नहींहोता— यदि आसक्त होजावे तब वह दर्शनसे च्युतहै—विशेष क्यालिखें—

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला हुकमचन्द जी साहब श्रीयुत पण्डित शीतल प्रसाद जी व श्रीयुत लाला मक्खनलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप लोगोंका समागम अत्यन्त हितकर है परन्तु उदयभी होना चाहिये। कल्याणकामार्ग सुलभ है किन्तु हृदय सरलहोना आवश्यक है— हृदयकी सरलताका अर्थ है अन्तरङ्ग मोह ग्रन्थि नहीं होनी चाहिये— हम अपनी कथा कहते हैं ७८ वर्ष के हो गये परन्तु भीतरसे जिसको कहते हैं उसपर अमल करने से वञ्चित रहे— निरन्तर जगतकी चिन्तामें व्यस्त रहे— इसमें अन्तरङ्ग रहस्य स्वप्रशंसा के भिक्षुक रहे—बाहर से भद्र बनना अन्तरङ्गकी भद्रताका अनुमापक नहीं—आप लोगोंको धन्य है जो निर्ममता से क्षेत्रपर धर्म्मध्यान करनेका लाभलेरहे हो— आप कुछ विचारें हमें जैसा ज्ञानमें आया लिखदिया—हमारा विचार श्री ईसरी में अन्तिम आयु के अवसान का है—अब श्री पार्श्वनाथ का ही शरण है— आपको वचनदिया था उसका पालन न करसके इसकी क्षमा चाहते हैं।

पौष बदि ३ सं० २००६

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीयुत महाशय लाला हुकमचन्द्र जी योग्य इच्छाकार—

पत्रआया समाचार अवगत किए— मेरी तो अन्तरंग यही सम्मति है आप लोगोंने पुरुषार्थकर जो समागम का लाभ लिया है वह सर्वको हो— अतः जहांतक बुद्धिपूर्वक पुरुषार्थ चले उसे १ मिनटको भी भंग नकरना— मेरेको तो आप महानुभावोंके समागमसे अपूर्वलाभ होगा इसमें कोई शंका नहीं परन्तु मैं हृदयसे यही चाहता हूँ जो आप लोगोंका निर्मोय समागम हुवा है वह आनिर्वाण भंग न हो— पुरुषार्थों में परम पुरुषार्थ मोक्ष ही है ३ पुरुषार्थों में शान्ति नहीं। चरमावस्था भी उनकी होजावे परन्तु इनमें शांति का आस्वाद नहीं—तथादि

अलमर्थेन कामेन सुकृतेनापि कर्म्मणा,
एभ्यः संसारकान्तारे न प्रशांतमभूत्मनः।
विहाय वैरिणं काममर्थञ्चानर्थसंकुलम्,
धर्ममप्येतयोर्मूलम् सर्वत्र चानादरंकुरु।

तात्पर्य यह है जो धर्म्म अर्थ कामसे संसारमें शांति नहीं प्रत्युत अशान्तिकी ही उत्पत्ति होती है— अतः आप लोगोंका जो पुरुषार्थ है वह निरपाय पदके अर्थ है— समागम उत्तमहो यह भी एक कहनेकी शैली है नहो यहभी एक कथन पद्धति है वस्तुकी स्वच्छावस्था ही तो हमको प्राप्तहो निरन्तर यही ध्येय ज्ञानीके है यद्यपि श्रद्धाकी प्रबलतासे सम्यग्ज्ञानीकी महिमा अनिर्वाच्य है तथापि चारित्र मोहनीयकी महिमाने ६ मास मृतमनुष्यको बलभद्र छोड़ न सका अस्तु इसके लिखनेका आपके सामने अवसर न था— विशेष क्या लिखूं कल्याणका मार्ग आपमें है हम अन्यत्र अन्वेषण करते हैं यही महती (   ) है बीचमें जो है सो मैं क्या लिखूं ? मेरा तो यह कहना है जितना पुरुषार्थ शब्द वर्गणाओंमें हमारा है उसका शतांशभी यदि आभ्यन्तरमें हो तब यह जोकुछ पर्यायमें होता है अनायास शान्त होजावेगा— बलवन्तसिंह यहां [illegible] मालूम हैं।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सर्वमण्डलीसे यथा योग्य— सत्समागममें यथार्थ निर्णय हो सकता है आजकल प्रायः जो लिखनेकी पद्धति है उसमें अहम्मन्यताकी गन्ध प्रायः रहती है अस्तु हम लोगोंको उचित है जो अन्तःकरण की शुद्धिपूर्वक तत्त्वका निर्णय करें— यदि अन्तःकरण न माने मत मानो फिर निर्णय करो—

भाद्र सुदि ६   आ० शु० चिं०
सं० २०१०   गणेशवर्णी

卐   卐   卐

श्रीमान् पं० हुकमचन्द जी तथा सर्वमंडली योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने प्रसन्नता इसबातकी है जोआप लोग सामूहिकरूपसे एक विशेष क्षेत्रपर तत्त्वविचार कररहे हैं— किन्तु अब अन्यत्र जानेकी इच्छा करनाही आपके तत्व विचारमें बाधक है— इस विकल्पको त्यागो जो अन्यत्र विशेष लाभ होगा— लाभतो पर समागम त्यागमें है नकि पर समागम में हम शिखर जी मोहवश जारहे हैं— लाभविशेष होगा यह नियम नहीं फिर आप ये कहोगे क्यों जारहे हो— मोहकी प्रबतासे— आपका समागम अति उत्तम है— तत्त्व विचार क्षयोपशमके आधीन है— कल्याण होना मोहकी कृशतामें है— समयसारही कल्याणमें प्रयोजकहो सो नहीं कल्याणका कारणतो अन्तरंगकी निर्मलता है कल्याणकी व्याप्ति मोहके अभावमें है— सर्वागमका ज्ञान इसका साधक नहीं— अतः भूलकर इस भीषण गर्मीमें अपने उपयोगका दुरुपयोग न करिये मैं आधे जेठमें गया पहुँचूंगा जहांपर हूँ यहांसे २५ मील है— श्री हस्तिनागपुरके मंदिर की शीतलताको त्याग बिहारकी ज्वालामें भूलकर अभी मतआइये— मैं आपको तथा आपकी मण्डलीको उत्तम दृष्टिसे देखता हूँ। अतः यही सम्मति दूंगा जो बाहर जानेके विकल्प त्यागिये— मैं तो जब मन्दिर जाता हूँ प्रतिमा के समक्ष यह भावना व्यक्त करता हूं कि

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

भगवन् तेरे ज्ञानमें ऐसा देखा गयाहो जो अब कल न आना पड़े— मेरी कार्यमात्र करनेमें यहीभावना रहती अब फिर न करना पड़े— चाहे शुभ कार्यहो चाहे अशुभ— आप लोग ज्ञानी हैं ज्ञानीके साथ मुमुक्षु भी हैं— फिर अब चिरस्थितिका एकस्थान बनाकर सर्वसे सम्बन्ध छोड़िये और मुझेभी अपना जान इन विकल्पोंसे मुक्त कीजिये विशेष क्या लिखूं—

तस्मस्स—

इस गाथाकी व्याख्यासे तो रागादि परिणामोंसे आत्माका व्याप्यव्यापक सम्बन्ध निषेध है और निमित्तकी मुख्यताका पुद्गल केसाथ व्याप्यव्यापक सम्बन्ध दिखा दिया है— विवक्षासे तो विरुद्धता नहीं आती विशेष समयपाकर लिखूंगा—

जितइन्द्रियका यहीतो अर्थ है जो द्रव्येन्द्रिय भावेन्द्रिय और भावेन्द्रियके विषय स्पर्शादिसे आत्मा भिन्न है विशेष फिर

ज्ञेयज्ञायक भावमें अन्तर रागादि न लेना— परभावविवेक कृत्वा— सामान्य वाक्य है चाहे गुरुहो चाहे शिष्यहो—

परस्पर एकीभूतान इव— यह पाठ है यही अच्छा है ज्ञानमें जो ज्ञेय आता है वह परस्पर एकरूप प्रतीत होता है विशेष फिर

टसिति के स्थानपर झटिति पद है।

अभी गर्मी बहुत पड़ती है इससे उपयोग नहीं लगता समय पाकर उत्तरदूंगा।

मंगल जी आनन्दसे हैं स्वाध्यायमें रतरहते हैं।

रफीगज
जेठ बदि ५ सं० २०१०

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्री सेठ जी साहब योग्य दर्शनविशुद्धि।

आपका कौनसा समय है जो समाधि शून्य रहता है। मेरातो निजका विश्वास है जिसकी श्रद्धा निर्मल है वहजो करनेयोग्य

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

था कर चुका शेषकाल जो संसारका है वह पूर्ण होताही है। अतः ये सर्व प्रक्रियाओं द्वारा हो रहा है। वह कर्त्ता नहीं। जिस दिन भेद विज्ञानका उदय हुआ उसीदिन कर्तृत्वभाव गया। वृक्ष की जड़ उखड़ गई अब हरापन के दिन का। मुझे तो इसबातका हर्ष है जो आपके कर्त्तव्यको सुनकर यही निश्चय हो गया जो पञ्चमकाल में भी उत्तम पुरुषोंका अभाव नहीं तथा आप जो भजन पढ़ते हैं "चिन्मूरति दृगधारी की" इत्यादि आपके आचरणसे अक्षरशः सत्य प्रतीत होता है।

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्री सेठ जी साहब योग्य इच्छाकार—

आप बहुतही विवेकी मानव हैं। ऐसा व्यक्ति इस कलिकाल में होना बहुत ही दुर्लभ है जिस व्यक्तिने मूर्छा त्यागदी वही व्यक्ति प्रशंसाका क्या, कल्याणपात्र है। मानवता का कारण धनादि नहीं, किन्तु मूर्च्छा त्याग है। धनका त्याग कोई त्याग नहीं क्योंकि वह हमारी वस्तु नहीं। रागादि त्याग भी उपचारसे त्याग है परमार्थ से वह भी तो हमारा नहीं औदयिक भाव है उसमें जो हमारी निजस्वकल्पना है उसे त्यागनाही त्यागहै—परमार्थसे ज्ञानका ज्ञानरूप रहना ही श्रेयोमार्ग है।

आ: शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत स्वानुभवरसिक सेठ हुकमचंद जी साहब इच्छाकार—

पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई— मेरी तो यह धारणा हो गई है जो सम्यक्दर्शन होने के अनन्तर जो भी कार्य होता है चाहे निर्ग्रन्थ साधु हो चाहे अविरत सम्यक्दृष्टि हो कर्तृत्वभावपूर्वक नहीं

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

होता, पर का रूप तथा परके निमित्त से होने वाले भावों का वह कर्त्ता नहीं बनता—इसका अर्थ यह है वह ज्ञानचेतना ही का कर्त्ता होता है। यद्यपि इसके अभी अविरत अवस्था में अप्रत्याख्यानादि कषाय विद्यमान हैं निर्ग्रन्थ के संज्वलनकषाय है तब मुनि जो कार्य संज्वलन के उदय में कर्त्ता है अभिप्रायः से उन्हें उपादेय नहीं मानता एवं सम्यक्दृष्टि भी अप्रत्याख्यानादिके उदयमें जो कार्य करताहै उपादेय नहीं मानता—मार्ग दोनों का एक है वहभी कर्मोदय को ऋणवत अदा कररहा हैं, अन्तर इतना ही है जो महाव्रति संसारके सर्वही कार्यों से उपरम हो चुका है यह अभी उनको करता हुआ तटस्थ रहता है। साक्षान्मोक्षमार्ग का दोनों के अभाव है। अतः मुक्तकी तरह गृहस्थावस्था में भी जीव मोक्षमार्ग के सन्मुख है गाड़ी लेनपर आगई एकको चलरही है एकको चलनेके सन्मुख है। आपको क्या लिखूं आप स्वयं ज्ञाता है तथा मर्मज्ञ विद्वानों के समागम में रहते हैं। सम्यक्दृष्टि आत्मानुभव करे तब और न करे तब मिथ्यात्व के असद्भावसे उसकी दशा स्वच्छ ही रहती है। उपयोग कहीं रहे सम्यक्दर्शन कृत निर्मलताका बल सदाही रहताहै। समाधिमरण के समय यदि असाताका तीव्र उदय आजावे एतावता सम्यक्दर्शनकृत विशुद्धि की क्षति नहीं। अतः आपको समाधि उत्तम हो जावे इसका विकल्प न करनाचाहिये। जिस भव्यजीवके सम्यक्दर्शन है उसके सप्तभय श्रद्धासे पलायमान होजाते हैं। उसकी दृढ़ता सामान्य नहीं जिसके होनेपर अनन्त संसार मिट गया उसके सद्भाव में अब भय किसका— विशेष क्या लिखूं—

कार्तिक बदि ३ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय परमविवेकी सेठ जी साहब योग्य इच्छाकार

पत्र बांचकर परम हर्षहुआ—आपके भावोंकी विशुद्धताही

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

आपके मोक्षमार्गमें कारणभूत है। अन्य निमित्तमात्र हैं। मेरेभाव में यह बात समागई जो पञ्चमकालमें भी उत्तम जीव हैं। आपको क्या लिखूं— आपके निमित्तसे अनेक जीव श्रद्धावान होरहे हैं— मैं बनारस होकर डालमियांनगर पहुंच गया—बनारसमें जो मन्दिर बनवाया गया है अत्यन्त मनोज्ञ है, मूर्ति परम सुन्दर है। अनेक प्राणी दर्शनसे लाभ उठा रहे हैं— आपके धर्मायतनोंमें इसकीभी गणनारहे ऐसा मेरा अभिप्राय है— यहांसे गया जाऊंगा।

डालमियानगर — आ० शु० चिं०

द्वि० बै० सु० ६ सं० २०१० — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्रआया— समाचार जाने— वस्तुस्वरूप जानकर उपेक्षाही सबके हो यह नियम नहीं— सम्यग्दृष्टि जीवके वस्तु परिज्ञान होता है ऐसा नियम है। उसके चारित्र मोहके सद्भावसे उदासीनता होती है न कि उपेक्षा— मोहके सद्भावमें आकुलता होना कुछ अनुचित नहीं— क्या पंचेन्द्रियोंके विषयोंको त्यागदेना उपेक्षा है? नहीं— उनमें रागद्वेष नहीं होना उपेक्षा है। यह चारित्र मोहके कृश भावमें होती है— आप व्यर्थकी ऊहापोहमें मत पड़ो— जो मार्गका अनुसरण किया है यही मोक्षमार्ग है। पूर्णतातो समय पाकर होगी अभीतो यथाशक्ति पर्यायके अनुकूलही शान्ति मिलेगी— १ सेर मुखवालेको १ तोला मिलना शान्तिका कारण नहीं— परन्तु स्वादतो आही जाता है।

जेठ सुदि १२ सं० २००२ — आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी साहब योग्य दर्शनविशुद्धि—

आप सानन्द होंगे— आप जहांतक बने आभ्यन्तर मूर्च्छाको

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

कृश करनेका प्रयासकरना— मेरातो यह विश्वास है अन्तरंग मूर्च्छा के दूर करनेमें कोई वाह्य निमित्त की आवश्यकता नहीं—आवश्यकता इस बातकी है जो हम उसको संसारका कारण जाने— जितनी आवश्यकता हम देवदर्शनकी मानते हैं उससे अधिक आत्मीय मूर्च्छा जाननेकी है। देवदर्शन करनेका फल मैंतो आत्मीय परिणति का ज्ञान होनाही मानता हूं— तथा शास्त्राध्ययनका फलभी यही मानता हूं— यदि आत्मपरिणतिकी प्रतीत न हुई तब यह सर्व विडम्बनामात्र है।

आ० सुदि १५ सं० २००२ आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 ×

श्रीमान् महाशय बाबू नेमिचन्द जी—

पत्र आया— समाचार जाने। क्या सम्यग्दर्शन होनेकेबाद जोप्रवृत्ति गृहस्थकी पहले थी वह एकदम छूटजाती है। मेरा तो यह श्रद्धान है यदि इसजीवके चारित्रवरणका क्षयोपशम न हो तब उस प्रवृत्ति में कुछभी अन्तर नहींआता, केवल जो आसक्तता विषयोंमें मिथ्यात्व अवस्थामें थी वह नहीं रहती, शिथिलता आजाती है। केवल विषय और कषायोंमें स्वरूपसे शिथिलता आजाती है। इसी का नाम उदासीनता है। इसीका नाम अनासक्ति है—

जिन जीवोंने अपराध किया है उन जीवों के ऊपर तत्काल अथवा कभीभी उनके वधाधिकेअर्थ अभिप्राय का नहोना इसे प्रशम कहते हैं। सम्यग्दृष्टि जीवका अभिप्राय इतना निर्मल है जो अपराधी जीवका अभिप्रायसे बुरा नहीं चाहता— अर्थात् उसकी वासना अतिनिर्मल है—उपभोग क्रिया जो उसके होती है उसका कारण कुछ और ही है। दर्शनमोहनीय कर्मके उपशमादि से वह भोगोंको नहीं चाहता है फिर भी चारित्रमोहके उदयसे बलात उसे उपभोग क्रिया करनी पड़ती है। बिना अभिप्रायके भी क्रिया होती

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है। एतावता उसके विरागता नहीं है ऐसा नहीं कह सकते। जब ऐसी व्यवस्था है तब यदि अविरती न्यायके व्यापार और विषयके कार्यों में भाग लेता है कौनसा अनर्थ है—इसका यह तात्पर्य नहीं जो स्वच्छन्दहोकर अनर्गलप्रवृत्ति करने लगजावे— यदि उसको आत्मकल्याणकी रुचि न होती तब निन्दा गर्हा क्यों करता—शास्त्र-स्वाध्याय से ज्ञानका विकास होता है और जिनके अभिप्राय विशुद्ध हैं—उनके यथार्थ तत्वोंका बोधहोता है—परन्तु इसका यहअर्थ नहीं जो तत्वज्ञानसे चारित्र तत्कालही हो जावेगा—चारित्र भाज्यहै—देखो स्वार्थसिद्धिके अहमिन्द्र-आजन्म मरणान्त तत्वविचारमें ही अपनी आयुको पूर्ण करतेहैं— उनके चारित्र का लेश भी नहीं तब क्या उनका तत्वज्ञान व्यर्थ है? नहीं। आयुके अवसान बाद मनुष्य जन्म में समय पाकर एकदम संयमके पात्र हो मोक्षकेपात्र होते हैं। यहआप कह सकते हैं वहां संयमकी योग्यता नही यहां तो संयमकी योग्यता है क्यों नहीं संयम होता—यह कोई नियम नहीं जितने अविरत सम्यग्दृष्टि हैं उन्हें संयम हो ही जावे, भाज्य है अतः इस विषयमें अपने अभिप्रायको देखो यदि उसमें मलीनता है लौकिक प्रतिष्ठादि के अर्थ यदि शास्त्रका अभ्यास और साधु-समागम है तब तो वह विशेष फलदायक नहीं और न आत्मश्रेयः केलिए है। अपनेको हठात् दर्शन के विरुद्ध भावोंका स्वामी मानना आपसे विज्ञपुरुषों को कदापि उचितनहीं— पदकेअनुकूल शान्ति का आस्वाद आता है— इस गृहस्थावस्थामें आप मुनिकी शान्ति का आस्वाद चाहें तब कैसे मिलसकता है— अविरत अवस्थामें जो मोक्षगामीजीव हैं उनकीभी यहीअवस्था रहती है, निरन्तर इसी प्रकार के भाव होतेहैं केवल अभिप्राय मलीन नहीं होता। अतः जिन जीवोंके अभिप्राय स्वच्छ हैं वे गृहस्थअवस्थामें श्रीरामचन्द्रजी की तरह व्यग्र होतेहुयेभी समय पाकर कर्मशत्रुका विनाशकरनेमें सुकुमालादिवत् आत्मीयशक्तिका सदुपयोग करनेमें नहीं चूकते—

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

कदाचित् आप यह कहो यहतो सर्व आगमोक्त ही तो कथा है इसमें कोई विवाद नहीं परन्तु अनुभवकी साक्षी देकर परामर्श करो तब यही निष्कर्ष निकलेगा— जो आगम तो निमित्त है यह सर्वकथा सम्यग्दृष्टिके परिणामों की है— आगम तो कथनकरनेवाला है— मेरातो यह विश्वास है जो सम्यग्दर्शन जैसा लोग दुर्लभ समझ रहे हैं नहीं है—आजतक हम लोग जो संसारमें अनेकयातनाओंके पात्र हुए इसका मूलकारण हमारी ही अज्ञानताहै— वाह्यपदार्थों का अपराध नहीं— और न मन वचन कायके व्यापारोंका अपराध है— और न क्रोधादि कषायोंका अपराध है अपराध हमारे विपरीत अभिप्रायका है – क्रोधादि कषायों की पीड़ा नहीं सही जाती इससे जीव उनका कार्य कर बैठता है परन्तु यह विपरीत अभिप्राय ऐसा निकृष्ट परिणाम है जो अनात्मीयपदार्थोंमें आत्मीयताका मान कराने में अपना विभव दिखाता है। यही मूल संसारका है।

आ० सु० १३ सं० २००१

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी वकील दर्शनविशुद्धि—

संसारमें शान्तिका कारण न तो सन्तसमागम है और न तीर्थ यात्रा ही है और न शास्त्राध्ययन ही है— निमित्तकी अपेक्षासे जो आवे सो कहदो और मनमें जोआवे सो कल्पनाको आश्रय दो, किन्तु यावत् अन्तरंगसे परपदार्थमें निजत्व की मूर्छा है तावत् ये सर्व निमित्त कुछ भी नहीं करसकते और मूर्छाके जानेपर अल्पभी निमित्त कार्यकर हो जाता है। अतः उसकी ओर लक्ष्यरहना ही हमारा कर्त्तव्य है।

का० सु० ४ सं० २ ०२

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्रीमान् बाबू नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

अन्तरंग स्वास्थ तो मैं उनका मानताहूँ जिन्हें तात्विक धर्मसे प्रेमहै—वह स्वास्थ जैसा आपका है वैसा ही मेरा है—गृहस्थकी झंझटतो उसके समक्ष कोई वस्तु नहीं—और उन झंझटोंको न तो आप इस पर्यायमें मिटा सकते हैं—और न मिटही सकती हैं। मेरातो यह विश्वास है जो एक लंगोटेवालेके भी पदके अनुकूल वह व्यग्रता है—और अधिक क्या कहूं—प्रमत्तावसान पर्यन्त भी वह झंझट है—सातिशय प्रमत्तसेही उन आपत्तियों से मुक्ति मिलती है—मलेरियाकी चिन्ता क्या करें। वह तो चिरसखा होगया है। शायद् पर्यायके अवसान में उसका अन्त हो—उसके मूल-कारणका वियोग तो अभीदूर है—आप अन्य विकल्पोंको दूर कर केवल एक विकल्पको रखिये जो अनात्मीय पदार्थों में आत्मीय बुद्धि न हो—

फागुन सुदि ८ सं० २००२

आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला नेमिचन्द्र जी वकील योग्य दर्शनविशुद्धिः—

महाशय आप विद्वान हैं—अविरत अवस्थामें न्यायपूर्वक आजीविका करना अपराध नहीं—अभिप्राय मलीन होने से आत्मा अपराधी होता है - आपके अभिप्रायमें यदि वञ्चनाका अभिप्राय नहीं तब आप मायाचारी नहीं—गृहस्थावस्थामें चाहे वह गृहविरत हो चाहे निरत हो आंशिक मोक्षमार्गकी बाधा नहीं—वैसे तो एक लंगोटी मात्र परिग्रह सोलह स्वर्गसे ऊपरका मार्ग रोके है। अतः सानन्दसे रहिये और धर्मसाधन करनेका जो आपका मार्ग है उसे प्रशस्त रखिये—वर्त्तमानयुगमें निष्कपट समागमका मिलना परम दुर्लभ है—सबसे उत्तम समागम तो अपनी रागादि परिणतिको घटना यही है—

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शन विशुद्धिः—

जो वेदना आपको है मुझे यह विश्वास है वह वेदना-प्रमत्त गुण स्थान तक रही है। अल्प बहुत्वका ही भेद है, जातिमें भेद नहीं—उसका अभाव तो मोह के अभावमें ही होगा—और जो सुख सिद्धों के हैं वही चतुर्थ गुणस्थानवर्त्तीके है—यहां पर अंश रूपसे है वहां पूर्ण है—अतः श्रद्धा होनेपर जितना प्रयास हो ऊपर जाने का होना चाहिये आकुलता को आश्रय न देना—मलेरिया तो परम मित्र हो गया है—उसका कहनाहै अन्तिम अवस्था तुम्हारी है—हम न होते अन्य रोग होते जो भयंकरता धारण कर बेसुध कर देते—हम वह दशा तो नहीं करते—अतः सन्तोष से सहो—यदि हमसे अरुचि करतेहो तब क्यालाभ—जिन परिणामोंसे हमारी सत्ता है उन्हें छोड़ो और हमारी चिन्ता छोड़ो आयुके अन्तमें तो हम जावेंगे ही परन्तु वह संसार वर्धक परिणाम तो साथ ही जावेगा। केवल पढ़नेमें व वाह्य त्यागसे कुछ लाभ नहीं—

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय नेमिचन्द्र जी साहब योग्य दर्शन विशुद्धः—

पत्र आया समाचार जाने—आपने लिखा इस पर्याय में आंशिक चारित्र भी नहीं धारण कर सकता—मेरी समझमें नहीं आता क्यों नहीं धारण कर सकते—क्या वाह्य कारणकूट उसके वाधकहैं? नहीं। अनायास अन्तरंग मूर्च्छाके अभावमें उसका सद्भाव हो सकता है—दूसरी बात—यह बात छोड़ो मैं अपनी श्रद्धा भी निर्बल पाताहूं—यह भी लिखना संगत नहीं—आपके तो कुछ

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

भी बातनहीं बड़े विलक्षण कार्य सम्यग्दृष्टियों द्वारा हुये जो अज्ञानी जीवोंकी दृष्टिमें सर्वस्वही अनुचित प्रतीत होतेहैं परन्तु बात विलक्षण है ज्ञानीका भाव अज्ञानीके हृदयमें आना कठिन है— क्या सम्यग्दर्शन होनेके बाद व्यापार छूट जाता है जो आर्थिक चिन्ता न करनी पड़े— एक सीताके अर्थ श्री रामचन्द्र महाराजने जो उपद्रव किये वचनातीत हैं— श्री भरतजीने जो किया सो कुछ आपसे छिपा नहीं. श्री माघनन्दि महाराजने जो किया प्रसिद्ध है—श्री समन्तभद्र स्वामी ने जो किया आबाल गोपाल विदित है— मेरा यह तात्पर्य नहीं जो स्वेच्छाचारको पुष्ट किया जावे— फिर भी वस्तु स्वरूपको अनुभवमें लाना चाहिये— मुझसे पूछियेतो हम लोग कुटुम्बहीन होकरभी संसारकी व्यग्रताके पात्र हैं। आपको ४ या ६ की चिन्ता होगी— परन्तु संघनायक आचार्यतो सहस्रों शिष्योंको शिक्षा दीक्षा देते हुये अखण्ड मुनिधर्म पालन करनेमें समर्थ रहते हैं— व्यर्थकी चिन्ता छोड़िये— आपतो विज्ञ हैं— औदयिक भावोंकी परिपाटीसे भयमत करिये— ऋणवत् समझकर सन्तोष करिये— विषयतो बहुत अच्छा है परन्तु शरीरकी दुर्बलतासे पूर्ण लिखनेमें समर्थ नहीं। प्रतिदिन ४ घंटा मलेरिया मित्रका सहवास रहता है - यह उसकी अनुकम्पा है जो प्रातःकाल १ घंटा स्वाध्यायको सानन्दसे करने देता है।

कार्तिक बदि ८ सं० २००२ — आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद बर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

असलमें जबतक अपनी कषाय परिणति है तबतक यह सर्व उपद्रव है। कषायके अभावमें कहीं रहो कोई आपत्ति नहीं— कषाय के अस्तित्वमें चाहेनिर्जन वनमें रहो चाहे पेरिस जैसे शहरमें निवास करो सर्वत्रही आपत्ति है। यही कारण है जो मोही दिगम्बर भी मोक्षमार्गसे पराङ्मुख है और निर्मोही गृहस्थ मोक्षमार्गके सम्मुख

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

है— खेद इस बातका है जो मोहीजीव स्वसदृशही निर्मोहीको बनाने की चेष्टा करता है आप मोहको नहीं छोड़ना चाहता। यहांपर क्या सर्वत्र यही बात देखने में आती है— हम जो लिखते हैं उसपर अमल नहीं करते केवल अपनी मलिन परिणतिको त्यागनेके भावसे वंचितकर छिपानेका प्रयत्न करते हैं।

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

पत्रआया— हमको अबतक मलेरिया मित्रता नहीं छोड़ता। जो उदय है उसे भोगनाही उचित है— यह कौन कहता जो गार्हस्थ्य जीवनमें निराकुलताकी पूर्ति नहीं। यदि निराकुलताकी पूर्ति गृहवास में होजावे तब कौन ऐसा चतुर मनुष्य इसे त्याग दैगम्बरी दीक्षाका आलम्बन लेता— एक कोपीनके सद्भावमें साक्षान्मोक्षमार्ग रुक जाता है— किन्तु इसका यह अर्थतो नहीं जो गृहावस्थामें एकदेश मोक्षमार्ग न हो— यदि गृह छोड़नेसे शान्ति मिले तबतो गृहछोड़ना सर्वथा उचित है यदि उसके विपरीत आकुलताका सामना करना पड़े तब गृहत्यागसे क्या लाभ— चौबेसे छव्वेहोना अच्छा परन्तु दुबे होनातो सर्वथाही हेय है। अभी दूरस्थ भूधरा रम्याः देखरहेहो— जिन्होंने गृहवास छोड़कर क्षुल्लक ऐलकतक पद अंगीकार किया— वे मोटरों व रेल सवारियोंमें सानन्द यात्रा कररहे हैं तथा गृहस्थोंसे भी विशेष आकुलताके पात्र हैं— तथा जो आरम्भ त्यागके नीचे हैं वे गृहस्थसे अधिक परिग्रह पासमें रखते हुयेभी त्यागी बनरहे हैं। तथा वृत्तिको इतनी पराधीन बना रक्खी है जो विवरणकरते लेखनी कम्पायमान होती है। अपना परिग्रहतो त्याग दिया और फिर अन्य से याचनाकर संग्रह करना क्या हुआ— खेती करनेके तुल्य व्यापार हुआ— आप विवेकी हैं भूलकर पराधीन न होना। सानन्द स्वाध्याय

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

में काल लगाना— किसी काममें जल्दी न करना। स्वर्गीय चिरोंजा बाई जीका कहना था कि बेटा अपना परिग्रह छोड़कर परकी आशा न करना, अन्यथा करनेसे दुःखके भाजन होंगे यह हमें अनुभव है।

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

आप सानन्द होंगे और शान्तिसे स्वाध्याय करते होंगे—निमित्त कारणोंकी प्रणालीसे कदापि क्षुब्ध न होना— यह प्रणाली सर्वत्र है संसारमें जहां जाइये वहीं यह अपना साम्राज्य जमाये है— परन्तु धन्य तो वह मनुष्य है जो इसके चक्रमें नहीं आता— निमित्त बलात्कार हमारा कुछ अनर्थ नहीं कर सकते। यदि हम स्वयं उनमें इष्टानिष्ट कल्पना कर इन्द्रजालकी रचना करने लग जावें तब इसे कौन दूर करे? हमी दूर करनेवाले हैं। अतः सर्व विकल्पोंको छोड़ केवल स्वात्मबोधके अर्थ किसीको भी दोषी न समझना और सर्वको हितकारी समझना। यदि ये बाह्य दुःखके कारण न होते कौन इस संसारसे उदास होता— अतः किसीभी प्राणीको अपना बाधक न समझकरही कल्याणका पथिक होता है—

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद

卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

पत्रआया समाचार जाने। आगमज्ञान मुख्यवस्तु है— पर पदार्थका ज्ञाता दृष्टा रहनाहीतो आत्माका स्वभाव है और उसकी व्यक्तता मोहके अभावमें होती है। अतः आवश्यकता उसीके कृश करनेकी है - यथार्थ ज्ञानतो सम्यग्दर्शनके होतेही होजाता है— इष्टानिष्ट कल्पना चारित्र मोहके उदयसे होती है— उसका अभाव

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

होना देश संयमादि गुणस्थानोंके क्रमसे होगा— आपलोग एकदम चाहते हैं कि हमारे वीतरागकी शान्ति आजावे— सो मेरी समझमें नहीं आता— पर्यायके अनुकूलही शान्ति मिलेगी— झपटा मत मारो शनैः शनैः सर्व होगा— विशेष क्या लिखें— तात्विक बाततो थोड़ी है विस्तार बहुत है— मेरीतो यह श्रद्धा है जो विपरीत मोहके जाने बाद जो आत्मानुभव सम्यग्ज्ञानीके होता है वही क्रमसे मोहादिकके अभाव होनेपर कैवल्यपदरूपमें परिणाम होजाता है— अगर आपकी श्रद्धा सत्य है तब आप अपनेको संसारी मत मानो क्योंकि सिद्ध पर्यायके सम्मुखहो— आशा है अब सर्व व्यग्रताओंको छोड़ जो पर्याय उत्पन्न हो गयी है उसे वृद्धि करने की चेष्टा करो— कदाचित् यह कहो सम्यग्दृष्टिभी तो निन्दा गर्हा करता है— मेरी इसमें यह श्रद्धा है सम्यग्दृष्टिके मोहके उदयसे निन्दा गर्हा होती है— वह अहम्बुद्धिसे उसका कर्त्ता नहीं— निन्दा गर्हा अनात्मीय धर्म हैं अनात्मीय धर्मोंमें उसके उपादेय बुद्धि नहीं— इसका अर्थ यह नहीं जो मैं स्वच्छन्दका पोषक हूँ— स्वेच्छाचारितातो सम्यग्ज्ञानीके होती ही नहीं। यदि वह स्वेच्छाचारीहो तब आत्मज्ञानसे च्युत है – क्यों कि आत्मख्यातिमें – जहां प्रतिक्रमणको विष कहा है वहां अप्रति-क्रमण अमृत नहीं होसकता—

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

बाबाजीका स्वास्थ्य अत्यन्त दुर्बल है— भीतरसे सावधान हैं— ऐसी अवस्थामें परमात्मारूप आत्माहीका शरण है— अन्यका शरण व्यर्थ है। मेरीतो यह धारणा है परकी सहायता परमात्मा पदकी बाधक है। आत्माकी केवल अवस्थाहीका नाम मोक्ष है— यदि आपको इतनी [illegible] है जो [illegible] विषाद नहीं

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

होता है तब हमारी समझ में और अधिक इससे क्या चाहते हो ? यदि चाह है तब वह समता नहीं आई केवल आभास है— जहां पर की चाह है वहां समता नहीं— समताका जहां उदय है वहां आत्मा की कृत्यकृत्यावस्था हो जाती है, करनेको शेष नहीं रहता।

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशयलाला नेमिचन्द्र जी वकील दर्शनविशुद्धि —

पत्र आया—समाचार जाने—मेरी समझमें यह व्याप्ति नहीं— जो संस्कृत जानने वाला ही तत्वचर्चा का अधिकारी होता है— अथवा जो हो इसमें हमको विवाद नहीं—हमारा तो यह विश्वास है जो आत्मज्ञान के प्रति दर्शन मोहाभाव कारण है उसके प्रति कारण पंच लब्धि हैं। उनमें ४ लब्धि जीवने अनन्त बार पाई— करण लब्धि बिना उसकी प्राप्ति दुर्लभ है— वह लब्धि क्या संस्कृत प्राकृतके ज्ञान से मिलती है ? यदि ऐसा नियम है तब तो हिन्दी आदि जाननेवाले वंचित ही रहेंगे— और प्रभु की दिव्यध्वनि का लाभ संस्कृत प्राकृतज्ञ ही लेसकेंगे—शेष तो बुद्धू के बुद्धू ही रहेंगे— आत्मज्ञान कुछ ऐसी कठिन वस्तु नहीं जैसाकि लोग समझ रहे हैं— आप और परका ज्ञान कोई दुर्लभ नहीं आपने पत्र दिया उसका कर्त्तृत्व आपमें है। आप लिखते हैं आ० आ० नेमिचन्द्र। यदि आपको अपना बोध नहीं तो क्यों लिखते हैं पत्र प्रेषक नेमिचन्द्र। अपनेसे मुझे भिन्न मानते हैं तभी तो जबलपुर के पते से पत्र दिया—और भेद ज्ञान क्या होता होगा— केवल आवश्यकता इस बात की है जो आत्मा में रागद्वेषादि होते हैं उन्हें औदयिक समझ पृथक करने का भाव होना चाहिये - पृथक करने का यह अर्थ नहीं— जो पर वस्तु को छोड़ दिया जावे—वे तो भिन्न द्रव्य के पर्याय है—उनमें जो निजत्व की कल्पना है उसे छोड़ा जावे

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

यह लिखनाभी मिथ्या है—जब हम उन्हें पर समझते हैं तब निजत्व की कल्पना नहीं हो सकती— केवल चारित्रमोह रागादिकी उत्पत्ति करता है किन्तु दर्शन मोहके जानेसे अल्पकालमें भी यह भी अनायास छूट जावेगा— श्रद्धान तो यथार्थ है परन्तु त्याग पर्याय के अनुकूल ही होगा—सौधमेन्द्र मनुष्य होकर मोक्ष जावेगा—उसके दृढ़ श्रद्धा है। परन्तु उस पर्याय में वह अणु मात्र भी त्याग नहीं कर सकता— एवं यदि मनुष्य भवमें किसीकी श्रद्धा निर्मल हो और वह न तो संस्कृत जानता है और न त्यागी है तब क्या उसकेआंशिक मोक्षमार्ग नहीं है इत्यादि—आप लोगोंकाउदय उत्तम है जो इस प्रकार धार्मिक भावोंका आदर करते हैं।

चैत्र सुदि ११ सं० २००३

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— लिखें आजन्मसे लेकर स्वाध्याय किया परन्तु जोबात होनी चाहिये वह न हुई तब क्या निकला— कहने से करने में बड़ाअन्तर है। तथा अब हमको विश्वास होगया जो गल्पवाद में आत्मशान्ति का लाभनहीं करसकता। अतः स्वाध्याय में प्रवृत्ति करना कार्यकारिणी है— स्वाध्याय से मेरी बुद्धि में यह आता है जो ज्ञान चारित्र दोनों का लाभ होता है। यदि स्वाध्यायसे चारित्र लाभ न हुवा तब मेरी तो यह प्रतीति है वह स्वाध्याय नहीं एक तरह का पढ़ना है। जैसे पं० पंडित लोग निरूपण करते हैं परन्तु पर्याय के अनुरूप भी चारित्र नहीं पालते अतः उनका शास्त्र पढ़ना विशेष लाभदायक नहुवा— उसी तरह यदि हम लोगों की प्रवृत्ति हो तब त्यागी और पंडित में अन्तर क्या रहा— आपतो विवेकी हैं। लक्ष्य स्वात्मकल्याण की ओर रहना चाहिये—हमभी यही चाहते हैं—किन्तु चाहते हैं करनेमें नहीं आते हैं यह भी

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

हमारीनिर्बलता है— सर्व अवस्था— की कल्याण में बाधक नहीं, सप्तमनरक की बाधा बाधक नहीं तब यह—का विचारा क्या बाधक होगा—विशेष क्या लिखें।

द्वि० अ० बदि १२ सं० २००७ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं हुकमचन्द जी साहब व श्री पं० शीतलप्रसाद जी साहब योग्य इच्छाकार—

पत्र आया, समाचार जाने— आप जानते हैं जो हम इस अनन्त संसार में आजतक भ्रमण कर रहे हैं इसका मूल कारण हमारी ही अज्ञानता थी— अब वह हमारा विश्वास है आप लोगों आगमाभ्यास तथा दृढ़ अध्वसाय से उसे हटा दिया है—श्रद्धा में तत्वपदार्थ आगया है—समय पाकर तद्रूप परिणमन होनेमें विलम्ब न होगा— अब चिन्ता करने की कथा करना सर्वथा अनुचित है— भ्रमज्ञानको भ्रम जाननाही भ्रमके ध्वंस का कारण है— मैं प्रशंसा नहीं लिखता। जिनको तत्व निश्चय यथार्थ होगया उन्हें तो भार उतरनेसे हलकापन आजाता है— तत्सदृश दशा का आस्वाद आने लगता है। यह बात ज्ञान ही जानता है। इसीसे ज्ञान गुणका महत्व अध्यात्म में है। यही कारण है कि संज्ञी पर्याय बिना ऐसा ज्ञान नहीं होता-- हमारे भोले भाई पञ्च इन्द्रिय व मनको खेदजनक मानतेहैं— ऐसा नहीं— यह तो ज्ञानके साधक हैं— बाधक तो विपरीत ख्याति है जिसमें मोह की पुट है—इसको भी ज्ञानी जानता है— मेरा तो आपसे कहना है आगात्माभ्याससे उत्तम उपाय आत्मकल्याण का नहीं—अन्य काम हो जावें हो जावो किन्तु उनका लक्ष्य न हो। हम तो अन्तरंग से आपके सत्संग को मोक्षमार्ग का साधक मानते हैं। आप लोग उसे सपल्लवित रखना।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सागर विद्यालय
वैसाख ब० ३ सं० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— हमारी तो यह सम्मति है आप अब निर्द्वन्द्वतापूर्वक धर्मसाधन करिये-स्थान तो सर्वत्र हैं और जो धर्मके साधन हैं वेभी सर्वत्र हैं—किन्तु मोही जीव अपनी परिणति के अनुकूल पदार्थ को देखता है। पदार्थतो जैसा है वैसाही है—किन्तु हम मोही जीव कामला रोगी के सदृश श्वेतशंखको पीतशंख व अपने अभिप्रायके अनुकूल उसे मानते हैं। मोक्षमार्गीजीव जिनेन्द्र प्रतिमा को अपने अनुकूल साधक मानते हैं और जो इस सिद्धान्त को नहीं मानते वे उसे प्रतिकूल ही मानते हैं— अतः पदार्थको अनुकूल प्रतिकूल मानना मोही जीवकी एककल्पना है—पदार्थ तो जैसा है वैसाही है— आपलोग तत्वज्ञ हैं— किसी के उपद्रवमें नहीं पड़ने वाले हो—मुझे तो यह विश्वास है जो हम संज्ञी मनुष्यों में कौन ऐसा है जो अपनेको जानता हो—किन्तु उस जाननेमें विपरीतत्तादि दोष हों यह अन्य बात है। कामला रोगीशंख अवश्य देखेगा परन्तु उसमें पीत गुण मानेगा—इससे सिद्ध हुवा धर्म में भ्रान्ति है न कि धर्म्मीमें। एवं मिथ्यादृष्टि का ज्ञानभी इतना विकसित है जो आत्माको जानता है परन्तु उसके धर्मों में भ्रान्ति है न कि धर्म्मी में सो इस भ्रान्तिका मूलकारण मिथ्यात्व का उदय है अतः आवश्यकता इस बात की है जो हम मिथ्यात्व को मिटावें—एतदर्थ हृदयको स्वच्छ करनेकी आवश्यकता है— जिसदिन यह स्वच्छ हो गया अनायास हमारा कल्याणहै- मैं तो अब पकपान सदृश हूं—परन्तु भीतरसे यह भावना है जोमोक्षमार्ग रुचिवान जीवोंका अस्तित्व सदैव इसकाल में रहे जो यथार्थ मार्ग चले— आपकी मण्डली का मुझे वहुत ही अभिमान है जो इस दुःसमकालमें आपभी तत्वज्ञ हैं-

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जहांतक आप लोगों के समागम में तत्वरुचि वाले ही रहें—मेरा सर्वसे यथायोग्य कहना।

आ० सुदि ६ सं० २००८

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका पत्र श्री भगतजीके पास आया— आपने लिखा सुभीता सर्ववस्तु का होना चाहिये— सो प्रायःजीवोंके अदृष्टाधीन सुभीता मिलही जाते हैं— परन्तु हम मोही जीव विकल्प बिना रहते नहीं। देखिये कहते हैं मोक्षमार्ग प्राप्त करने में अनेक प्रकार के विकल्प मेटना चाहिये— फिर कहते हैं— जपकरो तपकरो संयमकरो—यह विकल्प है या और कुछ है - परन्तु इससे कोई क्षति नहीं— आगी का जला आगीही सेकता है— हमको तो आप लोगोंके समागमसे शान्ति ही मिलेगी और आगम यह कहता है परका समागम शान्ति का बाधक—मोह की लीलाका माहात्म्य वर्णन करना मोही करनहीं सकता, निर्मोही बोलता नहीं, जो बोलताभी है वह मोहार्जित प्रवृत्ति का उदय है फिर श्री उसकी व्याख्या मोही ही करता है। विलक्षण तत्व है जो अविलक्षण में भेद आरोप करता है।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका पत्र भगतजी के पास आया। यहांपर बाह्यसामग्री सुलभ है परन्तु अन्तः सामग्री की दुर्लभता है—यह लिखता असत्य नहीं— प्रायः सर्वत्र ऐसाही देखा जाता है। हमारी सम्मति न कोई माने—अन्य की क्या कहें हम स्वयं उसका निरादर करते हैं—हमारी सम्मति यह है परसे परिचय करनाही पापकी जड़ है। परका

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अर्थ अपने आत्माको छोड़ सर्वपरहै—परका अर्थ संकुचित नकरना—सिद्धपर्याय तक लेना।

नोट—परिचय शब्द अर्थ केवल ज्ञान नहीं। जिसमें रागकी मात्रा मिली हो—राग उपलक्षण मोह द्वेषकी लेना—

आ० व० १४ सं० २००५

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

मेरा तो यह विश्वास है जो एकेन्द्रिय प्रभृति असंज्ञीजीवों पर्यन्त ईहादि ज्ञान नहीं होते— संसारमें शान्तिके उपाय जो जीव करते हैं वह नहीं, क्योंकि शान्ति का कारण तो अशान्ति के कारणों को त्याग करना चाहिये— आत्मा एकाकी द्रव्य है— हम द्रव्यान्तर को आत्मीयमान शान्ति चाहते हैं यह नितान्त असम्भव है— जहां पर को निजत्व माननेका अभिप्राय है वहां शान्तिमिले नितान्त असम्भव है—मेरी तो यह सम्मति है आप निज क्षेत्रमें ही निवास कराए, सुतरां श्रेयोमार्ग के समागम सुलभ हो जावेंगे। सत्समागम भी कल्याणका कारण है यह सर्व औपचारिक कथन है— उपचार में व्यवहार ही शरण है—समागमसे स्नेह होता है और वह बन्धक है। अतः किसी का समागम अच्छा नहीं।

आ० शु० चिं०,
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया सानन्द पहुंचगये—परन्तु सानन्द तो उसदिन होंगे जिसदिन परिग्रह के पंकसे स्वच्छ हो जावोगे – मैं जानता हूँ आपकी दृढ़तमश्रद्धा परिग्रह पंकसे निर्मल होनेकी है परन्तु क्रमश हटाना ही तो पड़ेगा—यह पंक आपही को मलीन किये हो सो नहीं हम सबही

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

तो उससे लिप्त हैं। यही कारण है जो हमारा उपदेश अन्धे की लालटेन सदृश है। यह कहना ठीक नहीं अन्धेकी लालटेन अन्य नेत्रवालों को तो दिखा देती है परन्तु यहां तो वह नहीं होता। यहां तो दो बधिरों की सी दशा है— अस्तु बात तो परमार्थ से यही है जो इस पंकको बहाना चाहिये—

आ० सुदि ८ सं० २००५

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—प्रश्न जो ६०८ निकलते हैं। यह तो अन्तराल की बात है— ६०८ ही मोक्ष नहीं जाते बहुत जाते हैं परन्तु अन्तराल पड़े तब ६०८ जाते हैं— अतः ६०८ ही निकलते हैं और ६०८ ही जाते हैं यह नियम नहीं—इसका निर्णय आप विद्वानों से करना हमतो इस विषयमें कुछ नहीं समझते क्योंकि यह हमारा विषय नहीं— हमारीतो यह सम्मति है जो यातायातके विकल्पों को छोड़ सानन्दसे स्वाध्याय करिए—हम अभी २ मास जबलपुरही रहेंगे—और चैत्र मासमें द्रोणगिरि जाने का विचार है वहांसे बरुवा सागर जाने का विचार है— कल्याणका पथ तो शान्ति में है— शांतिका मूलकारण मोहत्याग है। मोहसे यह जीव अनात्मीय पदार्थों में निजत्व की कल्पना करता है और जहांपर पदार्थमें आत्मीयता आगयी वहां जो अनुकूलहुए उनमें राग और जो प्रतिकूल हुए उनमें द्वेष स्वाभाविक हो जाता है। अतः सर्वसे महान पाप भगवान्ने उसेही बताया है। अतः जहांतक बने सो नहीं, मोहछोड़ना ही चाहिये आप लोग विज्ञ हैं विशेष क्या लिखें—

अ० सुदि ४सं० २००३

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीमान् महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—मैं हतभाग्य हूं—जो उत्तमद्रोणगिरि को छोड़कर सागर जा रहा हूँ। प्रतिदिन उष्णपरीषह और तृषा-परीषहका अनुभव कररहा हूं— सर्वस्थानों पर ढोल की पोल है—केवल वचनों की कुशलतासे संसार चक्रमें आरहा है—मैंतो उन्हें धन्य समझता हूं जो कुछभी ज्ञानकी प्रभुता न रखकर रागादि शत्रुओं पर विजय कररहे हैं। मैं अन्तरंगसे धनका मर्म जानता हूं— आज तक ।। न तो अर्जन किया और न पासमें)। रक्खा— परन्तु संकोच ऐसी बला है जो मेरा सर्वनाश करदेती हैं। मैं ईसरी में था तब चैन से था। ईसरी छूटी कि दर दर का होगया— न जाने कब तक इन अनर्थों से पिण्ड छूटेगा— आपकी मण्डली मर्मज्ञ है। मैं चाहता हूँ जो उसके वातावरण में रहूँ परन्तु अभी उदय नहीं आया— आपके प्रान्त में सर्वोत्तम स्थान बड़ागांव है परन्तु अभी आप लोगोंने उसे उपयोगमें नहीं लिया— हमलोग वाह्यप्रभावना चाहते हैं जोकि वाह्यमें सुन्दर दीखती है— अन्तरंग प्रभावना तो आत्मगुण विकास से ही है— आजकल परोपकार की ही मुख्यता है चाहे अन्तरङ्गमें कुछ न हो— अस्तु मैं ८ दिन बाद सागर पहुँचूंगा— तब ठीक परिस्थिति का परिचय कर पत्र दूंगा—मैं बलात्कार सागर जा रहा हूँ—अन्तरंग से नहीं जारहा हूं।

आ॰ शु॰ चिं॰
गणेशवर्णी

जेठ सुदि ९ सं० २००३

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दहोंगे—आपके सुपुत्रका स्वास्थ्य अब उत्तम होगा। यहांपर गर्मीका प्रकोप अभी पूर्ववत् है। हमारा विचार सौरीपुर बटेश्वर जाने का है। यह ३० मील पश्चिम है। वहां से आगरा ३० मील है। स्थान तो अच्छा मेरठ है किन्तु पहुँच नहीं सकते। अब तो उदयाधीन ही परिणमन हो रहा है। क्योंकि पुरुषार्थमें

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

मनोबलादि की आवश्यकता है। सो वृद्धअवस्थाके द्वारा शिथिल होगया। परन्तु इन बलसे परे भी कोई बल है, जो इन सर्व आपत्तियों के सद्भावमें ऐसा कार्यकरता है जो अनन्त संसार की प्रभुता क्षणमात्रमें नष्ट कर देता है। वह शक्तिभी प्रत्येक जीवमें है। निगोदिया जीव भी तो उसके बलसे मनुष्य होकर निजधाम का पात्र हो जाता है। तब इस निकृष्टकालके मनुष्य यदि २ या ४भव निजधामके पात्र हो जावें तो आश्चर्य नहीं करना चाहिये। परन्तु यहांकी तो लीला ही अपार है। हमारे समागम ऐसे निःसत्व हैं जो निरन्तर अपने को कायरताका ही पात्र मानते हैं। पञ्चमकाल है हुण्डावसर्पणी अल्पबुद्धि हीनबल आदि भावनाओं से ओतप्रोत हो रहे हैं। हमलोगोंने यहां तक पुरुषार्थ किया जो पत्थरकी मूर्त्ति—उसमें आदिनाथ की स्थापना कराके आदिनाथ के सदृश—तब जरा बुद्धिसे काम लोगे जो मनुष्य पत्थर में आदिनाथ बना सकता है।यदि वह मनुष्य अपने चेतनमें भगवान बनाले तो क्या आश्चर्य है। तत्वसे देखो तब वह तो आदिनाथ स्थापनाके हैं यहांतो भावके भगवान् होसकते हैं परन्तु सुननेवाला कौन है। अस्तु।

आ॰ शु॰ चिं॰
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं॰ हुकमचन्दजी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने। प्रसन्नता इसकी है जो इस भीषम समयमें आपलोग अनेकान्तमतका दिग्दर्शन करा रहे हैं। पदार्थ संसारमें अनेकहैं और रहेंगे। फिर भी सर्व अपने २ स्वत्व को लिये हुए परको अचुम्बन करते हुएही सुन्दरता के पात्र हैं—उनमें बन्धकी कल्पना ही जगत जननी है—बन्ध में दो पदार्थ रहते हैं और उनका विलक्षण परिणमन ही बन्ध है। फिरभी दो एक नहीं होते—शब्द पर्याय पुद्गल की है फिर परमाणु में उसका आविर्भाव

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

नहीं— किन्तु सर्वथा यहभी नहीं जो परमाणु से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। जो परमाणु पुञ्ज बन्धावस्थाको प्राप्त होगये उसीमें तो शब्द पर्याय हैं। क्या बन्धपर्यायमें द्रव्यसे परमाणु नहीं हैं? परन्तु फिरभी केवल परमाणुमें शब्द पर्याय नहीं— जैसे रुपये का व्यवहार ६४ पैसे का समुदायमें है केवल)। में नहीं— पाव आने में रुपयेका व्यवहार नहीं— इसीतरह शब्द पर्यायका व्यवहार स्कन्धमेंही होगा— स्कन्धआया कहांसे—परमाणुपुञ्ज का विलक्षण परिणमनही का नाम स्कन्ध है— एवं आत्मा में तो विभाव परिणति है वह केवल (शुद्ध) आत्मा में नहीं—जब उसके साथ मोहनीय का उदय होगा उसी अवस्थामें वह परिणति है—यदि कोई उदयको सर्वथा छोड़देवे तब रागका उत्पादक कारणही नहीं। तब यह रागादि परणति सामग्रीके अभावमें कैसे होगी समझमें नहीं आता—जैसे कुम्भ पर्यायकी उत्पत्ति मृतिका हीमें है परन्तु कोई कुम्भकारादिसामग्री को त्यागदेवे तब घटपर्याय केवल मृतिकामें स्वयमेव होजावे बुद्धि में नहीं आता—आत्मद्रव्य चेतन है। इसमें जो पर्याय होगी उसकी भी व्यवस्था कारणपूर्वक होगी— जैसे ज्ञानमें ज्ञेय झलका—ज्ञानही स्वयं उसको विषय करता है अर्थात् जानता है। वह जाननारूप परिणमन ज्ञानहीका है, परन्तु ज्ञेयहीका अस्तित्व नहीं तब परिणमन कहांसे आया बुद्धिमें नहीं आता। अतः कार्य कारणका अस्तित्व माननाही पड़ेगा— भिन्न २ द्रव्योंमेंभी कार्य कारणभाव होता है। वहतो एकसमय में भी होता है और भिन्न समय में भी होता है परन्तु एक द्रव्य में जो कार्यकारण भाव होता है वह पूर्व समय में कारण और उत्तर समय में कार्यरूप होता है— गुणों के परिणमन में एक समयमें भी होता है जैसे जिसकाल सम्यग्दर्शन होता है उसीकालमें सम्यग्ज्ञान होता है उसी कालमें स्वरूपाचरणचरित्र भी होता है। विशेष क्या लिखें— हम अन्तरंगसे कहते हैं जो आप लोगोंके सहवास को त्यागकर भेदियाकासार का लेना इधर उधर

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

चल दिये। इसमें किसी का अपराध नहीं— एतावता क्या किसीमें हमभी नहीं—यह नहीं— हमही अपराधी हैं क्योंकि अपराधीजीव ही दण्डकापात्र होता है - निमित्त कारण नहीं दण्डित होते। अब आपको हम सम्मति देते हैं जो आपलोग एक स्थान पर जहां हैं वहीं धर्मसाधन करियेगा - व्यर्थ नहीं भटकिये— जो रहे अच्छा है न रहे खेद न करिये—नवीन आजावे अच्छा है हर्ष न करिये— कल्याण अपना करना है अन्यका हो न हो इसका विकल्प नकरिये। मैं आप लोगोंको इस समय बहुत ही उत्तम समझता हूँ इससे इतना लिखने का साहस किया—अन्यथा आपकी इच्छा—

आसाढ़ सुदि सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दसे सलावा पहुँचे होंगे - आपका ज्ञानही आपका कल्याण करेगा - मेरा तो यह विश्वास है जो बिना सम्यग्ज्ञान के पदार्थोंका ज्ञान नहीं होता और बिना पदार्थ परिचय के श्रेयोमार्ग का लाभ नहीं— विशेष क्या लिखूं— मैं तो यह दृढ़विश्वाससे निश्चित कर चुका हूं जो यह आत्मा जितना व्यग्र रहेगा उतना ही संसार में कष्ट पावेगा— जो व्यग्रता को त्यागेगा वह सुखभाजन होगा—सुख कोई अशक्य पदार्थ नहीं केवल परकी मूर्च्छा त्यागही इसका कारण है—मेरा अपनी मंडली से इच्छाकार—

चैत्र बदि ८ सं० २००८

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० हुकमचन्द जी साहब योग्य इच्छाकार—

आप सानन्द पहुँच गये यह अत्यन्त प्रसन्नता की बात है अन्य जो कुछ हो परन्तु मुझे आपका समागम इष्ट है—यद्यपि समागम

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सर्वही कल्याणपथके प्रतिबन्धक है परन्तु जघन्य श्रेणी में जीवकी जो दशा होती है उस अवस्था में यह सर्व उपद्रव अनायास रहते हैं तथा रखना ही पड़ते हैं— यद्यपि वृक्षछायामें बैठा हुवा मनुष्य श्रमको दूर करनेमें सहकारी कारण छायाको मानता है फिरभी मार्गगमन का तत्वतः बाधकही गतिरोध को मानता ही है— अब हमारी गति प्रायः पक्पान सदृश हो रही है विशेष क्या लिखें— जो भवितव्य है होगा—

सागर
२२—३—५२

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—हमारा यत्न निरन्तर वाह्य पदार्थोंके गुण दोष विचारमें पर्य्यवसान हो जाताहै क्योंकि हमारे ज्ञानमें प्रायः वाह्यपदार्थ ही तो आरहे हैं। अन्तस्तत्व की ओर दृष्टिको अवकाशही नहीं मिलता— दृष्टि अन्तस्तत्व की अनुभूति कर सकती है परन्तु उसओर उन्मुखही नहीं होती— उन्मुखताका कारण जो सम्यग्गुण सो मिथ्यात्व के उदय में विकसित ही नहीं होता। अतः यदि कल्याण की अभिलाषा है तब इन वाह्यपदार्थों के चक्र में न आवो हमारी तो सम्मति यह है जो ऐसा अभ्यास करो जो यह वाह्यपदार्थ ज्ञेय रूप ही प्रतिभासे—अन्य की कथा तो छोड़ो जिसने मोक्षमार्ग दिखाया है वह भी ज्ञेयरूप से ज्ञानमें आवे।

ईसरी
का० सु० २ सं० १९९७

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—बन्धो अपना परिणाम निर्मल करने को चेष्टा करना ही पुरुषार्थ है— असंख्यात लोक प्रमाण कषाय हैं—

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

कल्याणकामार्ग सुलभ है— सरलता चाहिये— जो काम करें निष्कपटता से करें — आप कब आवोगे—हमको आपका देश इष्ट था क्योंकि उस प्रान्तमें विवेकी हैं किन्तु हमारी मोहान्धताने यहां ला पटका—परन्तु इसका विवाद नहीं। हमने अपनी परीक्षा करली। आप किसीसे ममता न करना। मैं तो कोई वस्तु नहीं परमात्मा सेभी ममता न करना—यही तत्व है। मोहका निर्मूल करना यही भावना हितकारीहै-हमको बड़ी प्रसन्नता इस बातकी है जो आप अब पहले से बहुत शांत हैं—मेरी मुजफ्फरनगरवालों से दर्शनविशुद्धि कहना।

ललितपुर — आ० शु० चिं०

आ० ब० १४ सं० २००८ — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार--

पत्र आया संतोष हुवा—तबतो परमार्थ से यही है जो परपदार्थ को पर मानना आपको आप मानना— ज्ञान में ज्ञेय आता है यह तो उसकी स्वाभाविक स्वच्छता है। उसमें ज्ञेय झलकता है अर्थात् ज्ञेय निमित्तक ही वह विकारावस्था को प्राप्त होती है। व्यवहार यह होता है हम ज्ञेय को जानते हैं। आपके पत्रसे यह निश्चय होगया जो आप समयसारके तत्त्वको समझने लगे हैं। रागद्वेषकी हानि स्वयमेवज्ञानीके होजाती है। हम कुछ नहीं जानते ऐसा स्वप्नमेंभी खेद नहीं करना चाहिये— तत्वसे विचार करो केवलीके ज्ञान और सम्यग्दृष्टिके ज्ञानमें विशेष अन्तर नहीं। वे भी स्वपरको जानते हैं यह भी स्वपरको जानता है। वे बहुत पर्यायोंको जानते हैं यह अल्प जानता है। सूर्य दीपककी तरह ही तो अन्तर है। अतः खेद करना हाय हम कुछ नहीं जानते अच्छा नहीं। स्वपरभेद ज्ञानसे अन्य अब क्या चाहते हो— रागादिक होते हैं एतावता सम्यग्दृष्टि के क्या बिगाड़ हो गया—उन्हें ज्ञेयरूपही तो जानता है—औदयिक भाव ही तो उन्हें मानता है— उन परिणामोंको उपादेय तो नहीं मानता—

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जैसे मुनि महाराजके संज्वलनके उदयमें महाव्रतादि होते हैं, उन्हें करता भी है और यथायोग्य भोक्ताभी होता है परन्तु वह मुनि उन्हें उपादेय नहीं मानता— जिन्हें उपादेय नहीं मानता उनके होनेमें परमार्थसे प्रेम नहीं—इसीतरह सम्यग्दृष्टि जीवोंकी विषय कषायके कार्योंमें पद्धति है— उनकी गाड़ी मोक्षमार्गमें तेज चालसे जा रही है— इसकी मन्दचालसे जा रही है अन्तर इतना ही है। अतः सर्वप्रकार के विकल्पोंको त्याग स्वाध्याय करते जावो। अन्य विकल्प करनेकी चेष्टा न करो तथा वह अच्छा और अमुक निकृष्ट यह सर्व विकल्पों को त्यागो— आपके पत्रसे हमको प्रसन्नता हुई। आप जब अवकाश मिले आना—निशल्य होकर आना—

ललितपुर — आ० शु० चिं०

आसाढ़ सुदि १४ सं० २००८ — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आप एक बार अवश्य आइये— वर्णी जी को शान्ति होगयी उत्तम हुवा—हमतो शान्ति उसको समझते हैं जहां फिर उस विषय का विकल्प न उठे— हमतो अब तक शान्ति के रस से वंचित हैं। हां श्रद्धा अवश्य है और यह विश्वास है काल पाकर शान्ति भी मिलेगी— आप लोगोंके चक्रमें आगए यह आप का दोष नहीं हमारी मोहकी दुर्बलता है अन्यथा कोई कुछ नहीं कर सकता। आत्मा सर्वत्र स्वतन्त्र है—परन्तु मोही जीव निरन्तर पर पदार्थों में दोषारोपण करता है— कल्याणकामार्ग कहीं नहीं आपहीमें है। यदि आप इस पर अमलकरोगे तब अल्पकाल में सुख के पात्र हो जावोगे और जो मोहके आवेग में आकर इतस्ततः भ्रमण करोगे तब जैसे वर्तमानमेंहो वही रहोगे केवल गांठका द्रव्य खो दोगे— हमारी तो यही सम्मति है जो किसीके चक्रमें न आवो अन्यथा जो संसारी जीवों की गति है वही गति होगी।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

१६ सितम्बर सन् १६४८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— आप जानते हैं हमारा आपसे धार्मिक स्नेह है और जबतक हमारे व आपके यह मोह है वहां तक ही यह संसार बन्धन है। जिस अन्तरङ्ग में यह वासना मिटजावेगी न मैं आपका और न आप मेरे— हम और आपतो अभी उस पथ के श्रद्धालु हैं चर्यामें अभी वह बात नहीं— चर्यामें आनेसे आपसे आप ममता मिटती जाती है। समता आती जाती है। एक दिन न रहेगी ममता न चाहेंगे समता — न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी– जो उपयोग शिष्टाचार में जाता है वह अपनेही स्वरूप संभालने में जावे तब परकी अपेक्षा न रक्खो। हम तो स्वयं इस जाल में फंसे हैं परन्तु आपको हितैषी जान यही कहेंगे आप इसमें मत फंसो— यदि हमारी सम्मति मानो तब परमेश्वर प्रेम भी त्यागो—भक्तिकरो यह भी कमजोरी का उपदेश है; मोह सद्भाव में ही यह होता है। परन्तु तात्विक दृष्टि से सम्यग्ज्ञानी कुछ नहीं करता, इसका अर्थ यह नहीं जो उसके भक्ति नही, परन्तु उसके अभिप्रायकी वही जाने। मेरा तो यह विश्वास है कोई किसी की क्या जाने— अपना २ परिणमन अपने २ में हो रहा है— व्यवहार की कथा विचित्र है।

जेठ सुदि ६ सं० २००४ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैनजी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— आप जो लिख रहे हैं लौकिक शिष्टाचार की यही प्रणाली है—परन्तु परमार्थ से विचारो—शास्त्रीय शब्दों के प्रयोग को छोड़िये— हम जब एकान्त से विचारते हैं तब

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जो पर पदार्थों में हमारी ममता है वही तो दुःख की जननी है—और भी गहरेपनसे विचारो तो पर को छोड़ो— जो हमारी निज शरीरमें आत्मबुद्धि है वही तो परमें ममताका कारण है— शरीरको भी छोड़ो—शरीरमें आत्मीय बुद्धिका कारण अन्तरङ्गमिथ्यात्व है। वही हमारा प्रबलशत्रु है। यदि वह न हो तब हम शरीर को पोषण करते हुए आत्मीय न मानें—अतः शत्रु पर विजय करना ही हमारा कर्त्तव्य होना चाहिये— जिसके एकत्व भावना हो गई उसके सर्व धर्म होगया—धर्म कोई बाह्यवस्तु नहीं—अन्तरङ्गमें कलुषितभावका न होना—यह भाव कब होते हैं जब अन्तरङ्ग अभिप्राय अति निर्मल हो जाता है—उसकेलिये केवल अपनी तरफ देखनाही बहुत है। पर की तरफ देखनाही संसारका कारण है— आत्मा का ज्ञान इतना विशद है जो उसमें निखिल पदार्थ प्रतिबिम्बित हो सकते हैं। परन्तु हमारे देखनेमें राग द्वेष मोह नहीं होना चाहिये—अन्तरङ्गसे न तो आप मुझे चाहते हैं और न मैं आपको चाहता हूँ। बहिरंगसे आप हमारे और हम आपके यही बात मोही पदार्थों में लगाना— जहां एकतरफ मोह है वहां दूसरी तरफ उपचारसे जो चाहो सो कहो—जैसे भगवानमें दीनदयालु पतितपावन आदि अनेक आरोप प्रतिदिन लोग करते ही हैं।

ज्येष्ठ सुदी ४ सं० २००४ — आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

महानुभाव इच्छाकार—

मैं आपको पुण्यशाली समझता हूँ जो तत्वज्ञ महाशयोंके सहवासमें आपका समय जाता है—यद्यपि आत्मा स्वाभावतः अद्वैत है—आत्मा ही क्या सर्ववस्तु अद्वैत है—और कल्याण लाभकेअर्थ यह अद्वैत भावना अत्यन्त उपयोगिनी है। एकत्व भावना का यही तत्व है। परन्तु मोहमें हमारी आत्मा इतनी पतित हो चुकी है जो

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

हम स्वयं अद्वैत होकर जगतको अपना माननेका प्रयास करतेहैं—ममेदम् अस्याहम् इत्यादि विकल्पों में उलझकर संसार के पात्र बने है—तथापि अहमेदं इत्यादि कम्मेणोकम्पम्दि इत्यादि पाठ हम पढ़ लेते हैं परन्तु उस रूप होने का प्रयत्न नहीं केवल सम्यग्दर्शनकी कथाकर सन्तोषामृत का पानकर तृप्ति करलेते हैं और यह भी कथा में ही रह जाता है—यदि परीक्षा करना हो तब जो तत्वका विवेचन कररहा है उसके प्रतिकूल शब्दोंका प्रयोगकरके प्रत्यक्ष उनके भावोंका निर्णयकरलो— अस्तु इसमें क्या रक्खा है—जो हो आप लोग जानें या प्रभु जानें— हम संसार को सुलझाने का उपदेश देते हैं, परन्तु स्वयं नहीं सुलझते—ब्रह्मचर्याश्रम व्यवस्थित चलता है और चलेगा यह तो ठीक है परन्तु त्यागाश्रम ठीक चलता है इसकी कथा भी नहीं यह क्या बला है—उस प्रान्तको पाकर यदि इस धर्मकी पुष्टि न की तब तो मैं यही समझा जो अभी उस आश्रमको नींव पक्की नहीं। अतः आवश्यकता त्याग धर्मकी है— इसके होनेसे एक ब्रह्मचर्याश्रम क्या सर्वही धर्मके कार्यनिर्विघ्न चल सकते हैं—इसके बिना लवण के बिना भोजनकी तरह कोईभी कार्यकी पूर्त्ति नहीं मेरा यह विश्वास है जो भोगी ही योगी हो सकता है— बिना भोगके योग नही मुख्यतया सुखीजीवही कालपाकर वीतरागी होसकता है। यह उत्सर्ग नहीं अपवाद भी है—दुःख में भी भावना अच्छी होती है। प्रायः तीर्थंकर स्वर्गसे ही इस भूलोक में अवतीर्ण होते हैं। किन्तु नरकसे भी आकर होते हैं। अतः कहनेका तात्पर्य यह है जो उस प्रान्तके मनुष्य भोगी बहुत है— अब उन्हें उचित है जो त्याग धर्मको अपनावे। बहुत दिन गाढ़ी दालमें घी का स्वाद चखा, मधुर रसका स्वाद लिया, पुण्य फलको भोगा, आजन्मसे आजतक यही किया—परन्तु इससे शरीरही को पुष्ट किया— जो परवस्तु है और परसे पुष्ट किया— गारा चूना ईंट से मकान ही बनता है इन्द्रभवन नहीं बन जावेगा— इसमें हमारा कोई अपराध नहीं—किन्तु उसको अपना

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

माना यही हमारी महती अज्ञानता है—अब इसे त्यागदेवें। अतएव त्याग धर्म की आवश्यकता है— आवश्यकता हमको इस बातकी है जो बहुत दिन इसपरको अपना माना, आजन्मसे यह कार्य किया— अब इस चोट्टापनको त्यागकर अपने को अपनावें जिससे संसारकी यातनाओं के पात्र न हो। इसके होते आपका जो आश्रम है वह अनायास चलेगा। अथवा आपका न आश्रम है और न आप आश्रम के हैं। यह व्यवहार भी न रहेगा— अथवा आपकी उसमें निजत्व की कल्पना है तब इस धर्मकी महिमा से वह भी विलीन होजावेगी— वह क्या विलीन हो जावेगी— श्री गोमट्ट स्वामी यात्राके जानेका विकल्प है वहभी शान्त हो जावेगा— जो कुछ आपके पास है उसे त्यागो और ब्रह्मचर्याश्रम को देकर अपरिग्रही बनो। श्री गोमट्ट स्वामी जाकर क्या इससे अधिक निर्जरा सम्पादन कर लोगे। सम्भव है आपकी मंडली इस वाक्य से असन्तुष्ट हो जावे परन्तु मेरा तो विश्वास है त्यागमें निर्जरा है और बन्दना में पुण्य है— आजकल अष्टान्हिका पर्व है, देवलोक नन्दीश्वर जाते हैं, पुण्य लाभ सम्पादन करते हैं—यदि हम चाहें तब संयत धारणकर उनसे अधिक लाभ ले सकते हैं— किन्तु समय पाले तब। अतः आप वहां जो आवे उसे यही उपदेश दें जो ब्रह्मचर्य पालन कर देवों को मात दो— त्यागधर्म का व्याख्यान करना। यह पत्र सुना देना—यह आकांक्षा न करना जो हमारे आश्रम को यह बलाय मिले—सर्वमण्डलीसे यथायोग्य—

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप समयसारका पाठ करते हैं— उत्तम है— कल्याणकामार्ग दरशाने का निमित्त है— उपादानशक्ति तो आत्मा में है। इसके उदय होतेही सर्व आपदाओं से आत्मा

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सुरक्षित हो जाती है— आवश्यकता हमको आत्मीय परिणति को कलुषित न होने देनेकी है। कोई संसारमें न तो हमारा शत्रु है और न मित्र है—शत्रुता-मित्रता की उत्पत्ति हम स्वयं करते हैं – जब एक द्रव्य दूसरेसे भिन्न है— फिर हम क्यों न उसको परजानें— क्यों परको आत्मीय मानें— यह मानना मिथ्यात्व है। यही जड़ संसारकी है। आज क्या अनादिकालसे यह जीव इसी मान्यता से दुखी है। यह मान्यता जिस दिन छूट जावेगी उसी दिन संसार बन्धन छूट जावेगा—बन्धनका करने वालाही बन्धनको मोचन कर सकता है। हम बन्धन करनेवाले परको मानते हैं और छुटाने वाले भी परको मानते हैं—बन्धन करने वाले स्त्रीपुत्रादि को मानते हैं और छुटाने वाले श्री अरिहन्तादि को मानते हैं। इस पर वस्तु की व्यवस्था में अपने अनन्त सुख को खो बैठे हैं—

जबलपुर

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार।

पत्र आया। आपका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगया यह पढ़कर अति प्रसन्नता हुई और आप रोग आक्रान्त होनेपरभी स्वभाव से च्युत नहीं हुए इसकी महती प्रसन्नता हुई—यह तो पर्याय कारण कूट से उत्पन्न हुई है एकदिन अवश्य ही विघटेगी। इसके रहने का हर्ष नहीं और जाने का विषाद नहीं करना ही महापुरुषों का मुख्य कार्य है— स्वभाव में विकृति न आने पावे यही पुरुषार्थ है। श्रद्धा अटल रहना ही मोक्षमार्ग की आद्य जननी है। आप निश्चिन्त रहिए और जो कुछ दृढ़ निश्चयकिया है वह न जावे यही महती पुरुषार्थता है— सम्यग्दर्शन होनेके बाद फिर अनन्त संसारकी जड़ कटजाती है फिर वह नहीं रह सकता। अपनी आत्माही अपनेको अनन्तसंसार से पार उतारने वाली है। परावलम्बनही बाधक है। आपके बालक

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सुबोध हैं—पुत्रों का यही कर्त्तव्य था जो आपके पुत्रों ने किया। मैं उनको यही आशीर्वाद देता हूँ जो वे धर्ममें इसीप्रकार निरन्तर दृढ़ रहें।

अगहन सु० ५ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया कल्याणका मार्ग यही है जो परमें निजत्व कल्पना न करना। आपत्तियां तो औदयिकी हैं, आती जाती रहती हैं। ऐसा उपाय करना जो अब अग्रेतन कालमें न आवें— मूल उपाय यही है उन्हें ऋणवत् अदा करता जावे— विशेष क्या लिखूं—संतोष से जीवन बिताओ।

अ० सुदि १२ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार।

पत्र आया समाचार जाने। आपकी श्रद्धा निर्मल है यहीकल्याण की जननी है। आत्मामें जो देखने जाननेकी शक्ति है वह निरन्तर रहती है। तरतम परिणमन रहे इससे हानि नहीं। हानि का कारण परमें निजत्व कल्पना है यही संसार की दादी है— जहांतक साम्य भाव हैं वहां तकही यह निज स्वरूपमें रहता है अगाड़ी बड़ा फंस गया। फंसाने वाला स्वयं विकृतभाव है—आपत्ति आने पर स्वरूप से च्युत न होना चाहिये। आप जानते हैं नारकी कितनी वेदना में ग्रस्त रहते हैं परन्तु वे भी उस अवस्थामें स्वरूप लाभके पात्र हो जाते हैं। अतः शारीरिक वेदना अन्तर्दृष्टि का बाधक नहीं फिरभी मोही जीव इस चक्र में आते रहते हैं। परपदार्थ का अणुमात्र भी अपराध नहीं।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

अगहन सुदि २ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय मंगलसेन जी इच्छाकार—

आप सानन्दसे जीवन यात्रा समाप्त करना— किसी की चिन्ता न करना। आत्मा एकाकी है, मोहके वशीभूत होकर नानायातनाओं का पात्र होरहाहै। आप तत्वज्ञानी हैं। सर्वविकल्प त्यागकर अन्तिम कार्य करना। मुझे पूर्ण श्रद्धा है जो आप सावधानपूर्वक उत्सर्ग करेंगे। आपके बालक समर्थ हैं। आप स्वयं समर्थ हैं। यही समय सावधानी का है। मूर्च्छा त्यागना। मैं तो कोई वस्तु नहीं, परमात्मा में स्नेह त्यागना।

अगहन ब० ६ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मंगलसेन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आए समाचार जाने— मेरा शरीर निरोग है। यह गल्प है जो मेरा फागुन में अवसान होगा—आप चिन्ता न करें संसारमें शान्तिका मूल चिन्तानिवृत्ति है। मेरी तो यह भावना है जो अपने स्वरूपको छोड़ अन्यत्र मनको न जाने दो। मोक्षमार्ग का मूलकारण परमें निज कल्पना का त्याग है। जिसकालमें मोहका क्षपण हो जावेगा रागद्वेष अनायास चले जायेंगे। आपतो ज्ञानी हैं। सर्व पदार्थ भिन्न हैं फिर अपनाना कहां का न्याय है–जिसदिन अपनाना जावेगा अनायास यह आपत्ति टल जावेगी। आप भूलकर अभी आने की चेष्टा न करना।

पौष सु० १२ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्रीयुत इन्द्रचन्द्र व सनतकुमार जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। श्री मंगलसेन जी का स्वास्थ अच्छा होगा। यदि स्वास्थ अनुकूल न हो तब रत्नकरण्ड श्रावकाचारमें जो मृत्यु महोत्सव है उसे अच्छीतरहसे श्रवण कराना। वहतो आपके पिताहैं। आपका कर्त्तव्यहै जो आप उन्हें अच्छे परिणामोंसे धर्म श्रवण करावें—मोहकेद्वारा हम संसार समुद्रमें अनादिकालसे भ्रमण कररहेहैं। अन्यउपाय नहीं केवल मोहपर विजय प्राप्त करनाही संसार के उद्धारका उपायहै। इसका जीतना कठिन नहीं। भेदज्ञानही रामबाण औषधिहै। आपका मंगलसेनजीसे हमारी इच्छाकार कहना तथा यह कहना जो आपने आजन्म तत्वज्ञानका अभ्यास कियाहै उसके फलका अवसर आयाहै। रञ्चमात्रभी प्रमाद न करना तथा अभक्ष्य औषध और इंजैक्सन न लगाना। आयुकी स्थिति वृद्धि करनेवाला कोईनहीं। पर्याय दृष्टिसे सर्व अनित्यहैं। मंगलपाठ आदि द्वारा सान्त्वना देनेमें असावधानी न करना पत्र शीघ्र देना।

अ० बदि ८ सं० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसेनजी योग्य इच्छाकार—

पत्रआया समाचार जाने—कल्याणका मार्ग कहीं नहीं अपनेमें हीहै। आवश्यकता श्रद्धा निर्मल परिणामोंकी है। जिसकी श्रद्धा दृढ़है उसका उत्थान अनायास होजाताहै। अनादिकालसे हमारी प्रवृत्तिपर पदार्थोंमें रही उन्हींसे आत्माका कल्याण अकाल्याण मान कर मोह राग द्वेष द्वारा अनन्त यातनाओंके पात्रहें। अतः इन पराधीनताके द्वारा हुए संकटोंसे यदि अपनी रक्षा करनेका भावहै तबअपनेको केवल जाननेका प्रयत्न करो। दृष्टि बदलनाहै। समीप ही श्रेयोमार्गहै। पराधीनता त्यागो। शुद्धचित्तसे परामर्शकरो। कहीं भ्रमणकी आवश्यकता नहीं। ऊष्णजलको शीत करनेके अर्थ जैसे ऊष्णता दूरकरनेकी आवश्यकता है रहेगा तो उसकी स्वभा—

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

विक वस्तुहै—इसी तरह आत्मामें शान्ति स्वाभाविक है परन्तु अशान्तिके कारण मोहादि शत्रुओं को दूर करनेकी आवश्यकताहै, शान्ति तो अन्तस्तल में निहित है।

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— भाईसाहब कल्याणका मार्ग तो जहां है वहांही है— यह तो हमारी आपकी कल्पना है जो पर भी कारण है। इसका निषेध नहीं परन्तु कार्यसिद्धि कहां होती है इस पर दृष्टि दान देना चाहिये— सामग्री कार्यका जनक है किन्तु कार्य कहां होता है यह भी विचारणीय है। आपतो सानन्द से स्वाध्याय करिये और जो कुछ परिणतिमें रागादिक हों उनमें तटस्थ रहिये। यही उनका त्याग है। अनन्त जन्म बीत गए। हमने अपनी परिणति पर अधिकार न पाया उसीका यह फल है जो अनन्त संसारकी यातना भोगी—उसका खेद व्यर्थ है। जो गयी सो गयी वर्त्तमान पर्यायको अन्यथा न जानेदेना चाहिये यही हमारा आपका कर्त्तव्य है। ज्वर अच्छा होगा।

अगहन ब० ६ सं० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—अब सर्वविकल्प त्यागो और जो मार्ग अंगीकार किया है उसी पर दृढ़तम रहो। आप स्वयं अपने आपको जाननेकी जो श्रद्धा है उसीके अनुकूल स्थिति बनाओ— अनन्त जन्म बीतगये कुछ पल्ले न पड़ा, पल्लेपड़े क्या ? परतो परही है उसके द्वारा कैसे शान्ति मिल सकती है ? अतः अब शेष जीवन

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सुखसे बिताओ— आपका पुत्र अनुकूल है इससे वाह्यचिन्ता तो आपको कोई नहीं। बाहर जानेका विकल्प त्यागो केवल रेलकी यातना और द्रव्य व्यय होता है। हमारा विचार अब १ स्थान पर रहनेका होगया है— गृहस्थोंका समागम सुखद नहीं— आपतो जहांतक बने स्वाध्यायमें मन लगाओ यही शान्तिका मूलमार्ग है— हम बराबर पत्रव्यवहार करते रहेंगे। अथवा इस पत्रव्यवहारमें भी समय मत लगाओ— चाहे आत्मचिन्तन करो चाहे अन्य पदार्थ ज्ञानमें आवे रागद्वेष नहीं होना चाहिये— इतनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लो जो श्री परमेष्ठीकी भी स्मृति न आवे—यह होना ही कठिन है।

पौष सुदि २ सं० २००६ आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

आपका स्वास्थ्य अच्छा है संयमही सिद्धिका मूल है। अब शीत कालमें एक स्थानपर ही रहना और वाह्यपरिश्रम विशेष न करना। समय पाकरही परमकल्याण होगा— तथा मेरा तो निजका यह विश्वास है जिसने मोहपर विजय प्राप्त करली उसने संसार पर विजय प्राप्त करली। सर्वसे प्रबल अरिके विजय होनेपर शेष अरि कोई रहताही नहीं। अन्य कर्मोंमें अरि कल्पना सहकारिता से है। परमार्थसे शत्रु तो मोह ही है। धन्य है उन महानुभावोंको जिन्होंने उस अरिको ही अरि समझा, जिसने इसपर विजयपाली वही परमात्मा का उपासक और निर्ग्रन्थ पद का पात्र होता है। यह भी एक कहना कुछ दिनका है वह स्वयं परमात्मा है। परमार्थ से वह वही है उसकी कथा कहना मोही का काम है वह अनिर्वाच्य है—

अगहन सुदि ६ सं० २००६ आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

श्रीयुत इन्द्रकुमार जी व श्रीयुत सन्तकुमार जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र नहीं आया सो देना। ला० मङ्गलसैन जी का स्वास्थ्य अच्छा होगा। धर्मात्मा जीव है, अतः उनकी वैयावृत्यमें त्रुटि न न करना। निरन्तर दशाधाधर्मका स्वरूप रत्नकरण्डसे सुनाना। पुत्र का यही धर्म है जो पिताके धर्मध्यानमें साधक हो। यों तो संसारमें प्राणीमात्र विकल रहते हैं किन्तु ऐसे भी हैं जो संसारको मिटा देते हैं। मङ्गलसैन मिटानेवालों में है। हमसे तो उनने निरन्तर धर्म-स्नेह किया। मुझे विश्वास है जो उनका परिणाम निर्मल ही रहता होगा। रोग तो अघातिया कर्मके उदयसे होता है जो आत्मगुणका घातक नहीं। किन्तु इन अघातियोंमें स्थिति अनुभाग देनेवाला कषाय ही है अतः जब हमें अघातिया पाप प्रकृतिका उदय आवे परिणामों में विशुद्धता रखने का प्रयत्न करें। ऐसा करनेसे उन पाप प्रकृतियों का अनुभाग न्यून हो जाता है जो औषध से अधिक उपयोगी है। यही कारण है जो हमलोग रोगादिक के लिये प्रायः धर्मकार्य करते हैं। धर्मका मर्म समझना कठिन है। पत्रोत्तर शीघ्र देना।

आ० शु० चिं०

अ- ब० ११ सं० २००६ — गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय चेतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धिः—

हमने जहांतक अनुभव किया है मूर्च्छाही संसारकी जननी है— त्यागका महत्व बाह्यत्यागसे ही प्रकाश में आता है। चावलका मल तुष दूर करने से होता है— फिर भी अन्तरङ्ग व्यापार की अपेक्षा है — स्वाध्यायप्रेमी बनो और सर्वसे मूर्च्छा त्यागो—

गया — आ० शु० चिं०

३—१०—५२ — गणेशवर्णी

Version 1